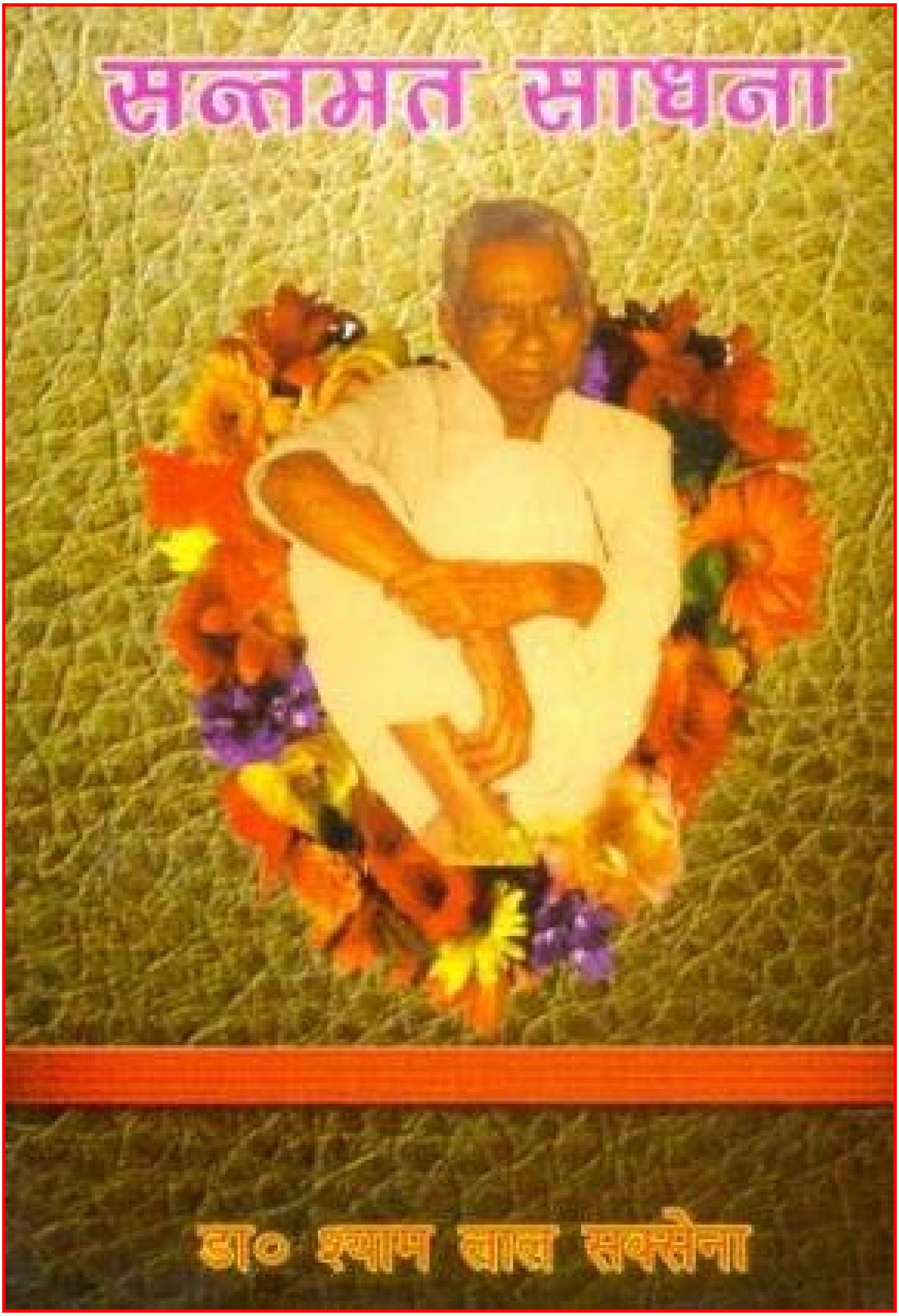
सन्तमत साधना
डा० श्याम लाल सक्सेना

❦ भजन ❧

आओ श्याम, आओ श्याम
आओ मन के मालिक श्याम।
तन नगरी के राजा आओ
जीवों के महाराजा आओ
आओ फन्द छुड़ाओ श्याम। आओ श्याम...

शिला तैराने वाले आओ
चीर बढ़ाने वाले आओ
आओ लाज बचाओ श्याम। आओ श्याम...

ऐ रघुकुल के राघव आओ
ऐ मधुवन के माधव आओ
आओ दास बनाओ श्याम। आओ श्याम...

ऐ दीनों के दानी आओ
मस्तों के अभिमानी आओ
आओ मस्त बनाओ श्याम। आओ श्याम ...

नयन युगल के प्यारे आओ
ऐ प्राणों के प्यारे आओ
आओ रूप दिखाओ श्याम। आओ श्याम...
आओ श्याम आओ श्याम
आओ मन के मालिक श्याम।

दो शब्द
(परम् पूज्य बाबू जी द्वारा)

मनुष्य जीवन कई योनयों के बाद मिलता है। कुछ लोग यह कहते हैं कि यह योनि 84 लाख योनियों के बाद मिलती है। जो कुछ भी हो इतना जरूर है कि यह योनि काबिले कदर है। यही एक ऐसी योनि है जिसमें हम अपने जीवन का खास उद्देश्य जो ईश्वर प्राप्ति का है, हासिल कर सकते हैं। आप जरा छोटे से लेकर बड़े से बड़े जानवर को देखें तो नोट करेंगे कि सबके शरीर की बनावट बिल्कुल एक सी है। सिर उसी में ऑखें, नाक, कान वगैरह सीना उसमें हृदय, फेफड़े और सबसे नीचे के हिस्से में पैर वगैरह। अब फर्क क्या है, सिर्फ चेतना का है।

दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि उस बुद्धि का जिससे ईश्वर का ज्ञान हासिल किया जाता है और यह जीवन जो इतनी योनियों का एक हीर है जिसमें हम ईश्वर का ज्ञान हासिल कर सकते हैं, वृथा खाने–पीने, ऐशो–आराम में बेसमझी से खो देंगे तो खुद को भी आखिर वक्त में काफी परेशानी हासिल होगी और पछतावा भी रहेगा।

अब सवाल उठता है कि वह कौन सा तरीका है जिससे ईश्वर प्राप्ति हो सकती है।सबसे पहले तो खुद यकीन कर लीजिए कि ईश्वर जरूर है, दूसरे ईश्वर एक ही है फिर ईश्वर प्राप्ति का जरिया भी एक ही होना चाहिए या है। फिर वह रास्ता कहॉ है? वह रास्ता आपके अपने ही घट में है। इन तीनों चीजों में या बातों में–

1. ईश्वर एक ही है।
2. ईश्वर प्राप्ति का जरिया भी एक ही है।
3. वह अपने घट में है।

पूर्ण विश्वास नितान्त आवश्यक है।

अब सवाल यह उठता है कि कैसे उस रास्ते पर चला जाये? पहले रास्ते की तफसील जो संतों ने की है, उसे सुन लीजिए और हर बात पर गौर से सोचते जाइए। उन लोगों को जिन्हें महान आत्मा कहा है, वह सब भी एक ही नतीजे पर पहुॅचे हैं।

सन्तमत साधना आन्तरिक अभ्यास और अनुभव का विषय है जो सन्तों की खोज और कृपा का फल है। इस युग में जो सन्तों ने कृपा

का आध्यात्मिक साधना को गृहस्थ में रहते हुए भी असल लक्ष्य तक पहुॅंचने के लिए अति सरल और प्रभावकारी बनाया है, उनमें परम सन्त सद्गुरू महात्मा राम चन्द्र जी महाराज (फतेहगढ़, उ0प्र0) का नाम विशेष उल्लेखनीय है। यह आपकी असीम कृपा का फल है कि आज लाखों अभ्यासी हिन्दुस्तान और विदेशों में सन्तमत साधना को अपनाकर जीवन सफल कर रहे हैं। ऋषियों और सन्तों की यह आध्यात्म विद्या जो युगों से गुरु से शिष्य को प्राप्त होती चली आ रही है, उसे यहां जिज्ञासुओं और साधकों के लिए बोलचाल की भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आशा है कि यह पुस्तक विज्ञासुओं के लिए सद्गुरु की तलाश करा उनसे आन्तरिक सत्संग और आन्तरिक साधना का लाभ प्राप्त करने की प्रेरणा देगी और साधकों को सद्गुरु के मार्ग दर्शन में सत्य की खोज और आध्यात्मिक प्रगति व अनुभवों की पुष्टि करने में सहायक होगी।

परमात्मा सबका कल्याण करें।

गाजियाबाद (उ0प्र0) विनीतः
विजयदशमी, 27 अक्टूबर 1982 श्याम लाल

दो शब्द

पुस्तक ''सन्तमत साधना'' परम् संत डा0 श्याम लाल सक्सेना उर्फ परम् पूज्य बाबू जी महाराज प्रस्तुत गाजियाबाद द्वारा लिखी गयी है। यह पुस्तक यथार्थ में उन लोगों के लिए बहुत उपयोगी है जिन्होंने सतगुरु की सोहबत करके अपने घट में कुछ अनुभव किये हैं। उन अद्भुत अनुभवों की सत्यता मिलान करके वह अपने पारमार्थिक उपलब्धियों का आंकलन कर सकते हैं। वह जिज्ञासु जो अभी बिल्कुल नये हैं, उनको प्रथम जीवन चरित्र पढ़ना चाहिए, सत्संग करना चाहिए तथा गुरुदेव जो बतायें वही करना चाहिए क्योंकि जब तक साधक में पुख्तगी न आये, उसका अंतर प्रकाशित न होने लगे, तब तक यह सब समझ में नहीं आयेगा। हर सन्त अपने शिष्यों, अपने उत्तराधिकारियों के लिए अपने अमूल्य अनुभव, अपने विसाल के पहले जहॉ तक संभव है, कलमबद्ध करता है, जिससे उसने जो अनुभव प्राप्त किए हैं (उनके शब्द और उनके अर्थ) समझ पायें, यद्यपि परमात्मा का ज्ञान तो शब्दों से परे हैं फिर भी दिव्य पुरुषों ने जितना सम्भव है, उतना लिखा है।

मैं ऐसा अनुभव करता हूॅ कि कोई भी साधक किसी पुस्तक या ग्रन्थ का गुलाम नहीं है। किसी सन्त सद्गुरु का अनुयायी या प्रेमी बन कर वह सब भक्ति ज्ञान और परमार्थ को विकसित कर सकता है। यहॉ तक कि अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। शर्त वही सच्चा सतगुरु, सतगुरु पर सच्ची श्रद्धा, विश्वास तथा सत्संग या सतगुरू की सोहबत। इन तीनों की सहायता से साधक अटूट प्रेम व समर्पण को प्राप्त करके अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है, परन्तु फिर भी पुस्तक का अहम स्थान है। देखने में आया है कि किताबों के पढ़ने से कई बार लोगों में परमार्थ की इच्छा तथा तड़प उत्पन्न होती है। यही इस रास्ते की मुख्य सीढ़ी है।

यह पुस्तक संतमत साधना दो भागों में भाग–1 तथा भाग–2 में प्रकाशित थी। पुस्तक की एक हजार प्रतियॉ प्रथम बार छपी थीं। पाठकों ने इसे बहुत सराहा और सभी एक हजार प्रतियॉ समाप्त हो गयीं। प्रेमीजनों की लगातार मॉग और पुस्तक की महत्ता, महानता तथा उपयोगिता को देखते हुए इस पुस्तक का दूसरा संस्करण छापा जा रहा है। पुस्तक के इस संस्करण में पाठकों की सुविधा हेतु पाठन सम्बन्धी पाठ्य सामग्री सबको एक जगह करने का प्रयत्न किया गया है। इस दिशा में दोनों पुस्तकों को मिलाकर एक पुस्तक का रूप दिया गया है। पुस्तक में कुछ भी परिवर्तन नहीं किया गया है जिससे उसकी महानतम गरिमा बनी रहे, केवल क्रम संख्या में बदलाव किया गया है। पुस्तक का कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग सभी विधियों के जिज्ञासुओं, अभ्यासियों के लिए उपयोगी है। परम्पूज्य बाबूजी द्वारा लिखित पुस्तक को यथावत प्रस्तुत करने के पश्चात

सेवक ने अपने यहाँ प्रचलित गुरुवंदना, अस्सलाम, गायत्रीमंत, दरुदशरीफ आदि भी सब पूजा की विधि में लिख दिया है। पुस्तक की जान तो परम्पूज्य बाबूजी के शब्द ही हैं।

प्रोफेसर साहब डा0 एस0एन0राय, गाजियाबाद का मै बहुत आभारी हूँ, जिन्होंने बहुत परिश्रम (कम्प्यूटर टाइपिंग आदि) करके पुस्तक को छपने यह्महम्हय बनाई है। ईश्वर एवं बुजुर्ग उनको तथा उनके परिवार को दीन और दुनिया दोनों से खुश रखें और अपना सच्चा प्रेम दें।

श्री जे0पी0 बाजपेई जी का आभारी हूँ जो सदा ही सहयोगी रहे हैं। ईश्वर उन्हें दीन और दुनिया में खुश रखें।

चि0 गौरव, लखनऊ निवासी को मेरा बहुत आशीर्वाद है जिसने कम्पेयरिंग में बड़ी मदद की है। ईश्वर तथा बुजुर्गो से प्रार्थना है कि उसे हर तरह से खुश रखें और राहे रास्ते पर कायम रखें।

मैं श्री अनिल श्रीवास्तव एवं उनके पुत्र आशीष का बहुत आभारी हूँ जो पुस्तक के प्रकाशन में पूर्ण सहयोगी हैं। ईश्वर उनको इस नेक काम का नेक बदला अपना प्रेम देकर करें, मेंरा भी उनको बहुत–बहुत आशीर्वाद है।

परम् पूज्य बाबूजी महाराज के कठिन परिश्रम को देखकर मेरा सिर उनके चरणों में नतमस्तक हो जाता है। प्रेमी जनों की सर्वांग भलाई के अतिरिक्त उन्हें कुछ नहीं चाहिए था। यद्यपि उनके जीवन काल में भी वही मेरे आदर्श थे, Complete man पूर्ण पुरुष, परन्तु आज जब उनकी डायरी उनके संजोये पत्र पढ़ते हैं तो लगता है कि कितना परिश्रममय जीवन था। हर क्षण अपने सद्गुरु को समर्पित जीवन, उनके काम के प्रति पूर्ण समर्पण ही उनके जीवन का लक्ष्य था। धन्य हैं वे महापुरुष जिनको ऐसी तड़प हासिल हो गयी। धन्य हैं वो जीवन जो यथार्थ में परमार्थ को समर्पित हैं।

साधु चरित शुभ चरित्र कपासू, निरस विशद गुनमय फल जासू।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा, वंदनीय जेहिं जग जस पावा।।

भवदीय,

डा0 वी0के0 सक्सेना

बी–1/26, सेक्टर–के, अलीगंज, लखनऊ।
फोन–0522–2745588 मोबाइल–9335238479

प्रस्तावना

ब्रह्म विद्या आत्मानुभव का विषय है। यह इल्म सीना है, इल्म सकीना है। यानि यह विद्या गुरु से चिष्य के हृदय में आती है। शास्त्रों से इसकी प्राप्ति नहीं होती, फिर भी ऋषियों और सन्तों ने कृपा कर अपने गूढ़ अनुभवों को अधिकारी जीवों के कल्याण के लिए इशारों में और जहॉ तक खोल कर भी समझाया है। ऋषियों के आध्यात्मिक ज्ञान के ग्रन्थ–वेद, उपनिषद, ब्रह्म सूत्र और श्रीमद् भगवतगीता मुख्य हैं। ऋषियों की वाणी में आध्यात्मिक साधना को योग कहा गया है, जिसका अर्थ है अपने निजधाम से जुड़ जाना या अपने ईष्ट में लय होकर एक हो जाना या परमात्मा के सिवाय और सब चीजों से बेताल्लुक हो जाना। योग की तीन मुख्य किस्में हैं– कर्म, भक्ति और ज्ञान। ये तीनों अंग सभी साधनाओं में रहते हैं। लेकिन जहॉ कर्म की प्रधानता होती है, उसे कर्म योग कहते हैं, जहॉ भक्ति की प्रधानता होती है, उसे भक्ति योग और जहॉ ज्ञान की प्रधानता होती है, उसे ज्ञानयोग कहते हैं। इनमें भक्तियोग बीच का रास्ता है। भक्ति साधना को सभी स्त्री पुरुष गृहस्थ में रहते हुए भी सहूलियत से कर सकते हैं। इसलिए सन्तों ने भक्ति पर जोर दिया है।

सन्तों की तालीम व सन्तमत साधना ब्रह्म विद्या है जो साधक को धुरपद तक पहॅचाती है। सन्त मत के प्रमुख अंग हैं, सद्गुरू सत्संग और सतनाम। सन्तों के आन्तरिक अभ्यास–सुमिरन–ध्यान भजन से और सद्गुरू की सोहबत से आत्मा का सच्चा प्रेम जाग्रत होता है जिसे सन्त तुलसीदास जी ने साधना और समस्त सतकर्मों का फल बताया है।

वेद पुराण सन्त मत एहू। सकल सुकृत फल राम सनूहू।

सद्गृरु के चरणों में अनुराग और गुरुदर्चन से जो प्रभु प्रेम जाग्रह होता है, उसी से सच्चा वैराग पैदा होता है। सन्तों के संग से विवके सहज में पैदा हो जाता है जो और किसी साधना से पैदा होना और बना रहना बहुत कठित होता है जैसा कि सन्त तुलसीदास जी ने श्री रामचरितमानस में स्पष्ट किया है–

बिनु सत्संग विवके न होई, राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।
ज्ञान पंथ कृपान की धारा, परत खगेच्य होहिं नहीं बारा।।

ज्ञान साधना कठित है और इसके द्वारा विवेक और वैराग का स्थायी रहना कठित है। सच्ची भक्ति और सेवा भी सद्गुरु के कमल रूपी चरणों से ही प्राप्त है, यानि कर्म, भक्ति व ज्ञान तीनों ही असल रूप में सन्तमत साधना से सरलता से प्राप्त हो जाते हैं।

मौलाना रूम फरमाते हैं–''तुम रहवर यानि सद्गुरू की तलाश करो, बिना उसके यह रास्ता बहुत मुश्किल है। अगर तुम हज करना चाहते हो तो ऐसे त्रख्स को साथ लो कि जिसने हज कर रक्खा हो चाहे वह हिन्दू हो तुर्क हो या किसी भी वर्ण और जाति का हो, उसके दामन को मजबूती से पकड़ लो। सन्त तुलसीदास जी ने भी राम चरित मानस में गुरु की आवश्यकता पर जोर दिया है।

गुरुबिनु भवनिधि तरइ न कोई।
जौं बिरंच संकर सम होई।।

सन्त सद्गुरु दयाल देत्र के वासी होते हैं, उनकी कृपा व प्रेमवर्षा (फैज) से साधक की सुरत स्थूल से खिंचकर सूक्ष्म चक्रों में प्रवेश करती है और निज स्वरूप की झलक का आनन्द अनुभव करती है। सन्तमत साधना और गुरु कृपा से अन्तर में सूक्ष्म चक्रो का जाग्रत होना चक्रवेधन कहलाता है। गुरु कृपा से व प्रेमवर्षा से ही भवबन्धन कट जाते हैं और साधक की संसार से आसक्ति कम हो जाती है। वह आत्म प्रेम, लयावस्था और मुमुक्षता की ओर बढ़ने लगता है। यह आन्तरिक विद्या इस सिलसिले के बुजुर्गों जिनमें परमसन्त महात्मा रामचन्द्रजी महाराज (फेहगढ़,उ0प्र0) अग्रणीय हैं, की इस युग के लिए महान देन है।

सन्तमत साधना का अभ्यासी सत्संग और गुरु चरणों में अनुराग द्वारा विवेक और वैराग प्राप्त करता है। वह अन्तर में दिनोंदिन प्रेम और सद्गुणों का विकास करते हुए चरित्रनिर्माण करता है। उसमें साधन चतुष्टय के षट सम्पत्ति यानी त्रम, दम, तितिक्षा, उपरति, श्रद्धा व समाधान आदि सद्गुणों का सहज रूप में उदय होने लगता है। सन्तमत की साधना और आन्तरिक सत्संग से प्रेम में खिंचता हुआ साधक अन्नमय कोष, प्राणमय कोष और मनोमय कोष से ऊपर उठकर विज्ञानमय और आनन्दमय कोष में प्रवेश करता है और ज्यों–ज्यों वह यम (सत्य, अहिंसा,

अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) नियम–(शौच,तप, सन्तोष, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान) का पालन करता है, उसे षट सम्पत्तियों की प्राप्ति होती है।

शमः– षट सम्पत्तियों में पहली सम्पत्ति शम है, जिसका अर्थ है दिल का ठहराव हो जाना और एक्राग्रता आ जाना जिससे मन शान्त रहे और वृत्तियॉ हटकर एक ओर अपने ध्येय की प्राप्ति में लग जाये। जब ध्यान सबसे हटकर एक पर केन्द्रित हो जाता है तो चित्त अपने स्वरूप में लीन हो जाता है, यानि चित्त निरोध की अवस्था प्राप्त हो जाती है। चित्त वृत्ति निरोध हो जाना ही योग कहलाता है।

दमः– दूसरी सम्पत्ति दम है जिसका अर्थ इन्द्रिय दमन है लेकिन सन्तमत साधना में इसका अर्थ इन्द्रियों पर काबू पाना है ताकि उनका सदुपयोग हो सके और बुराइयों के बजाय अच्छे कर्म और सेवा कार्य होने लगे।

उपरतिः– तीसरी सम्पत्ति उपरति है जिसका अर्थ है उपराम हो जाना। भोगों को भोग कर उनसे तृप्ति हो जाती है। साधक को अनुभव हो जाता है कि सुख किसी भोग को भोगने में नहीं है और यहॉ जो कुछ भी है, वह नाशवान है। वह सांसारिक भोगों को दोष दृष्टि से नहीं देखता बल्कि मन, बुद्धि की सफाई होने से सांसारिक भोगों को निस्सार जानकर उनसे उदासीन हो जाता है।

तितिक्षाः– चौथी सम्पत्ति तितिक्षा है। इसमें सहन शक्ति आ जाती है। साधक मालिक की मौज जानकर कष्टों को भी खुशी से बर्दाश्त करता है। उसे मान अपमान की भी कोई चिन्ता नहीं रहती, उदासीन और शान्ति की हालत हो जाती है।

श्रद्धाः– पॉचवी सम्पत्ति श्रद्धा है जिससे तात्पर्य है सद्गुरु व सद्ग्रन्थों में पूर्ण विश्वास हो जाना। जब तक सच्चा विवेक और वैराग पैदा नहीं होता और सांसारिक वासनाओं से ऊपर नहीं उठ जाता यानि जब तेक मन बुद्धि साफ नहीं हो जाते, उस वक्त तक सच्ची श्रद्धा पैदा नहीं होती। श्रद्धा पैदा होने पर उद्धार की चाह प्रबल हो जाती है और साधक गुरुकृपा व गुरुप्रेम पाने के लिए आतुर रहता है।

समाधानः– छठी सम्पत्ति समाधान है। इसमें बुद्धि शुद्ध हो जाने पर शान्ति हो जाती है और संशय और तर्क–वितर्क समाप्त हो जाते हैं और समावस्था आ जाती है, राजी व रजा की हालत हो जाती है। यानि उसकी इच्छा में खुशी अनुभव करता है।

षट सम्पत्ति प्राप्त होने पर सिवाय ईश्वर दर्शन और उसके समीपत्व पाने की कोई इच्छा बाकी नहीं रहती। यही मुमुक्षता है जो दुर्लभ होते हुए भी सन्तमत साधना और गुरु कृपा से सुगम हो जाती है। महान चक्र भेदन सिलसिले के सन्तों की तालीम की तारीफ में कहा गया है।

अव्वले मा आखिरी मुन्तही अस्त।
आखिरे मा जेबे तमन्ना तिही अस्त।।

अर्थात जो आम साधकों की आखिरी मंजिल होती है, वहॉ से इस सिलसिले के महान सन्तों की तालीम की शुरूआत होती है और इसकी आखिरी मंजिल वह है जहॉ इच्छाओं से छुटकारा हो जाता है। यह इस तरह मुमकिन हो सका कि सिलसिले के बुजुर्गों ने दया करके अपनी तवज्जह और प्रेम वर्षा (फैज) का तरीका अपनाया ताकि सुरत को प्रेम आकर्षण से खींचकर ऊपर के सूक्ष्म चक्रों में प्रवेश कराया जा सके और ऊॅचे स्थानों का अनुभव तरीके जज्ब द्वारा हो सके। जिसको मन बुद्धि सफाई हो जाने पर साधक तरीके सलूक (अभ्यास) द्वारा भी अनुभव कर सकता है। इसका फायदा यह है कि नीचे के स्थूल चक्रों को जाग्रत करने में जो बहुत वक्त लगता था और जिसका फल सीमित होता था, मेहनत और वक्त को ऊॅचे अभ्यास में लगाया जा सकता है जिससे सूक्ष्म अध्यात्मावस्था का अनुभव किया व कराया जा सकता है। सन्तों की इस महान तालीम को पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है जिससे प्रेमी जिज्ञासु बहुत लाभ उठा सकते हैं।

विनीत–

डा0 श्याम लाल सक्सेना
7, रामाकृष्णा कालोनी, गाजियाबाद।

सन्त मत

जिस मत की हम लोगों ने पैरवी की है, उसका नाम सन्तमत है, जो कि पिछले जमाने में निहायत गुप्त रहा। जो सन्त प्रकट होते थे वे मुद्दतों परखने और आजमाईश करने के बाद अन्तःकरण यानि जमीर साफ करके सिर्फ खास–खास अधिकारियों को इस ऊँचे और सच्चे नाम का भेद बतलाते थे। यानि पिछले जमाने के जो बुजुर्ग हुए,उन्होंने इसको फैजेआम (सब पर कृपा) नहीं किया, बल्कि खास खास और चुनिन्दा लोगों को सच्चे नाम का भेद बताया। लेकिन इस घोर कलयुग में जीवों को निहायत निर्बल, कमजोर और दुनिया में फॅसा हुआ देखकर जो इस मौजूदा जमाने में सन्त हुए, उन्होंने अपनी मेहर का बल देकर लोगों को भवसागर से पार करने के लिए फैजेआम जारी किया या जारी फरमा दिया।

सन्त मत में तीन बातें बहुत जरूरी हैं– सद्गुरु, सतनाम और सतसंग। अव्वल गुरु पूरा और सच्चा चाहिए यानि सन्त सद्गुरु। दूसरे नाम भी सबसे ऊँचा –सच्चा पूरा और असल यानि जानी चाहिए मय भेद नामों के। सिफाती (गुणात्मक) नामों से काम नहीं चलेगा। तीसरे सतसंग भी सच्चा चाहिए और इसकी दो किस्में हैं। एक सत्संग अन्तरी (आन्तरिक) और दूसरा बाहरी। आन्तरिक सत्संग वह है कि अभ्यासी अपनी सुरत यानि जीव आत्मा या रूह को अन्तर में चढ़ाये और सत्पुरुष के चरणों में लगावे या उस तरफ मुतवज्जह करे।

दूसरे जब इसको दर्शन और संग सत्पुरुषों का जो कि सच्चे और पूरे सन्त हैं, और साधु हैं–नसीब होंवे, तब उनके वचन सुने और दर्शन करे और जो सेवा बन पड़े करे। इन दोनों किस्म के सतसंग से कुछ दिनों में हालत साफ बदलती हुई मालूम होगी जो काम परमार्थी किस्म के हैं– जैसे तीर्थ, वृत, मन्दिर में जाना और पोथियों का पाठ,इन सब कामों से जरा भी अन्दरूनी हालत नहीं बदलती क्योंकि इन कामों में निज मन और जीव आत्मा यानी रूह जिसको सन्त सुरत कहते हैं, शामिल नहीं हाते और इसी सबब (कारणों) से इन कामों का असर जाहिर नहीं होता। अलबत्ता जाहिर आनन्द और अहंकार वगैरह दिल में आ जाते हैं।

सूरत यानि जीव आत्मा या रूह जो खास सतपुरुष का अंश है, इस जिस्म में एक बड़ा जौहर (असल तत्व) है, जिसकी ताकत से कुल बदन (तन) और मन और इन्द्रियॉ वगैरह अपना अपना काम करते हैं। सो सन्तों ने इसी जौहर को छॉट कर उसके असल भण्डार और खजाने की तरफ मुतवज्जह किया और जब इसकी सच्ची तवज्जह उधर को हुई तब आहिस्ता आहिस्ता इसकी हालत भी बदलती जाती है और दुनियॉ और उसके पदार्थ रोज बरोज नजर में ओछे और हकीर (तुच्छ) दिखायी देते हैं। इस जौहर लतीफ (सूक्ष्म तत्व) का असल मुकाम यानि ठहराव पिंड यानि जिस्म में ऑखों के पीछे है और वहां से यह तमाम देह में फैला हुआ है और सब अजजाओं (अंगों) को ताकत दे रहा है और इसका भण्डार और खजाना आदि शब्द यानि आदि नाम है।

आदि शब्द कुल का करता और मालिक है और आदि सूरत यानि अव्वल जहूर का नाम सुरत है। इन्हीं का नाम सुरत और शब्द है और जब इसकी धार नीचे आई तब इसी आदि शब्द से और शब्द व आदि सुरत से और सुरत व शब्द प्रकट होते आये और अपने–अपने मुकाम पर कायम हुए। आदि शब्द निहायत गुप्त है और उसकी उपमा यानि नमूना इस रचना में कहीं नहीं है। इसी आदि शब्द से सत्पुरुष प्रकट हुए। अतः पहला सत्पुरुष का शब्द है जिसको सत्नाम और सत्शब्द भी कहते हैं और जिसकी सत् कुदरत से क्रमशः सोह्म् पुरुष और पारब्रह्म और ब्रह्म और माया प्रकट हुए। इस तरह दूसरा सोहम् पुरुष का शब्द है। तीसरा परब्रह्म का शब्द है जिसकी मद से तीन लोक की रचना ठहरी हुई है और चौथा ब्रह्म का शब्द है जो कि प्रणव है, जिसमें सूक्ष्म शब्द यानि ब्रह्मांडी वेद और ईश्वरी माया प्रकट हुए। माया और ब्रह्म का शब्द है जिससे त्रिलोकी की रचना का मसाला प्रकट हुआ है और आकाशी वेद जाहिर हुए। माया शब्द के नीचे विराट पुरुष का शब्द और जीव और मन का शब्द प्रकट हुआ।

सन्त मत का तरीका भक्ति मार्ग का है। यानि सच्चे और पूरे मालिक के चरणों में प्रेम, प्रीति और प्रतीत करना। इसको उपासना और तरीकत भी कहते हैं। इस मार्ग में या तो सन्त सद्गुरु और साधगुरु की महिमा है, या उनके असली शब्द स्वरूपस की महिमा है। सन्त सत्गुरु उनको कहते हैं कि जो सत् पुरुष के मुकाम पर पहुॅचे। साधगुरु उनको कहते हैं जो ब्रह्म और पारब्रह्म के मुकाम पर पहॅचे। जो यहॉ तक नहीं पहुॅचे उनको साधु और सतसंगी कहा जाता है।

इन दोनों यानि सन्त और साध का असली स्वरूप शब्द स्वरूप है तथा बाहरी स्वरूप नर स्वरूप है जो कि वे लोगों के समझाने–बुझाने उपकार और उद्धार के लिए शरीर धरकर संसार में प्रकट होते हैं।

जब यह मालूम हुआ कि ये पूरे सन्त या पूरे साधगुरु हैं तो फिर उनमें और सत्पुरुष या पारब्रह्म में भेद नहीं माना जाता है। इस वास्ते जब–जब पूरे सन्त या पूरे साधगुरु प्रकट होते हैं तो उनके चरण सेवक उनकी महिमा सत्पुरुष या पारब्रह्म के बराबर करते हैं। इस जाहिर स्वरूप की सेवा, दर्शन और उनके चरणों में प्रेम और प्रतीत करने से और जो जुगत (युक्ति) वे बतलावें उसके अभ्यास करने से सुरत यानि जीव आत्मा, मन और माया के जाल से अलग होकर आकाश में और उसके परे चढ़ती है और अन्तर के स्वरूप यानि शब्द में पहुॅचती है, तब सच्चा और पूरा उद्धार जीव का होता है।

इस मत के मानने वालों और इस अभ्यास के करने वालों को चन्द रोज में अपने आप में अन्तर मालूम हो जावेगा कि यह क्या भारी नियामत और दुर्लभ पदार्थ उनको मिला है। यह अभ्यास और यह मत खासकर उन लोगों के वास्ते हैं, जिनको सच्चे मालिक से मिलने की चाह है, और जिनको अपने जीव के कल्याण और उद्धार की हिल में चिन्ता है, जो लोग दुनिया के सामान और नामवरी मान, बड़ाई, इल्म यानि विद्या को पसन्द करते हैं और परमार्थ को अपना रोजगार अपनाते है, उनके वास्ते यह उपदेश नहीं है और न ही उनको यह कलाम (वचन) पसन्द आवेगा, बल्कि जहॉ तक मुमकिन होगा वे इस पर ताना करेंगे और गलत और फिजूल ठहरावेंगे। वजह इसकी यह है कि इस वचन को सुनकर उनका मन घबरा जाता है इसको मानने से उनकी दुनिया और देह (शरीर) के मजे बिल्कुल जाते रहें तथा रोजगार में फर्क आ जायेगा। वे यही कोशिश करेंगे कि लोग आडम्बरों में फॅसे रहें ताकि उनकी पूजा और फरमांबरदारी (आज्ञापालन) में बाधा न आवे और आमदनी कम न हो पावे।

सन्त मत के सिद्धान्त

1. सन्त मत का पहला सिद्धान्त ''हुमाअजोस्त'' है जिसका अर्थ है कि सब कुछ उसी से है– सब जड़ चेतन उसी से है– वही एक सब का आधार है। सह सतचिदानन्द है, जिसका स्वरूप प्रेम व दया है। वह गुणों से ऊपर है– निर्गुण है। सूफियों ने इसे जात व अन्य सन्तों ने इसे दयाल पुरुष या सत्पुरुष कहा है, यही परमात्मन् है।

जो शक्ति ब्रह्मण्ड की बर्हिमुख रचना करती है, वह काल या प्रकृति है। सह सत् रज तम की त्रिगुणात्मक शक्ति है और इसमें सत् रज तम समावस्था में है। मगर बिना जात के इसका कोई वजूद नहीं है क्योंकि इसकी शक्ति का आधार वही दयाल पुरुष है, फिर भी यह उससे अलग है क्योंकि यह त्रिगुणात्मक है– वह निर्गुण है और गुणों से ऊपर है। इस तरह अद्वैत की चोटी से उतर कर दो का अहसास होता है। इसलिए सन्तमत के मुताबिक अद्वैत सत्य है मगर द्वैत भी अपनी जगह ठीक है।

2. सन्तमत का दूसरा सिद्धान्त यह है कि ''पिण्डे सो ब्रह्मण्डे'' यानि जो पिण्ड में है, वही ब्रह्मण्ड में है। ब्रह्मण्ड का आधार दयाल पुरुष है और बर्हिमुखी पसारा मन का है। आत्मा दयाल पुरुष का अंश है और मन त्रिगुणात्मक शक्ति काल का अंश है। यहॉ मन से मतलब पूरे अन्तःकरण यानि मन, चित्त,बुद्धि व अहंकार इन चारों से है। मगर शास्त्रों में अन्तःकरण की कार्यवाही को समझााने के लिए इसे इन चार भागों में बॉटा गया है। यह चारों त्रिगुणों की हद में है और काल के अंश हैं। इस तरह जीवात्मा में दयाल पुरुष का अंश आत्मा है और प्रकृति का अंश मन है। आमतौर से जीवात्मा अपने केन्द्र अंशी की ओर खिचने में समर्थ नहीं है। वजह यह है कि मन जो कि प्रकति का अंश है, वह बर्हिमुखी पसारे में फॅसने से शुद्धावस्था में नहीं रहा। यानि सत्–रज–तम की समावस्था में नहीं है। इसलिए दयालअंश का जौहर जो कि प्रेम या आकर्षण है, बिल्कुल दब गया है और आत्मा अपने केद्र की ओर नहीं खिंच पाती। मन की असन्तुलनावस्था का पहला नतीजा अहं या खुदी है

जो कि सबसे सख्त परदा और मजबूत बन्धन है। इस परदे में जीव अपने आप को ढक कर बिल्कुल अन्धा हो जाता है और बर्हिमुखी कोशिशों में सुख तलाश करता है और काम, क्रोध, लोभ, मोह के परदे इस पर चढ़ते चले जाते हैं इस तरह आत्मा परदे दर परदे कैद होती जाती है। इस हालत में जीवात्मा मन के असन्तुलन और प्रेम के दब जाने की वजह से अपने अंशी से बिल्कुल भिन्न नजर आती है। इसलिए परमात्मा, प्रकृति और जीव का द्वैत अनुभव होता है। सन्त मन के अद्वैत का इससे कोई विरोध नहीं है, क्योंकि सब पसारा उस एक से है।

सन्त मत का तीसरा सिद्धान्त कम फल का है। इसके मुताबिक जीव अपनी चाह और कामना के अधीन जो कर्म करता है, उसका फल उसे जरूर मिलता है। इसका मकसद यह है कि जीव कर्म भोग कर पलटे और उसमें परमार्थी चाह पैदा हो। यानि वह सांसारिक भोगों की निस्तारता को समझे और बर्हिमुखी चाह न उठावे और अपनी असली अवस्था को हासिल करे। अगर जीव लक्ष्य की ओर मुड़ने लगता है तो दयाल पुरुष की दया और क्षमा का सहारा भी इस हद तक उसे जरूर मिलता है कि वह बर्दाश्त की ताकत को सम्भाल रखता है। अगर कर्म परमार्थी चाह के साथ किए जाते हैं और निष्काम हैं, यानि बिना किसी बर्हिमुखी चाह के हैं और समर्पण के साथ चाह के हैं और समर्पण के साथ किए जाते हैं तो जीव कर्मफल से मुक्त रहता है। इसलिए जीव को दया और क्ष्मा का सहारा पाने के लिए लक्ष्य की ओर मुड़ना चाहिए और आईन्दा के लिए कर्मफल से मुक्त होने के वास्ते परमार्थी को

4. **सन्त मत का चौथा सिद्धान्त** यह है कि बिना सद्‌गुरु की शरण लिए जीव का उद्धार मुमकिन नहीं है। इसकी वजह यह है कि जीव जिसने अपने आप को खुद बॅधवा रखा है और बॅधता चला जा रहा है और जिसका प्रेमांग परदे दर परदे दबा हुआ है, वह अपने आप को कैसे खोल सकता है और अपने के पूरी तरह कैसे उभार सकता है? इसका सबसे मजबूत बन्धन अहं का है जो अपनी कोशिश से और भी मजबूत होता है जैसे कोई शख्स मजबूती से बॅधा हुआ है और वह अपनी हैकड़ी और ताकत दिखाता है और अपने आपको फुलाता है तो बन्धन और कस जाता है। जब तक वह पतला नहीं होता यानि शरण नहीं लेता तब तक बन्धन ढीला नहीं होता है। यह जीव उस शेर की तरह है जिसने अपने आपको बॅधवा लिया है और भेड़ों के बीच में भेड़ रूप हो गया है। यह अपने आप अपनी असली अवस्था को हासिल नहीं कर सकता, क्योंकि

यह बॅधा हुआ है और इसका जौहर बिल्कुल दब गया है। लेकिन अगर यह अपे आपको खुलवाने के लिए सीधे–सीधे खड़ा रहे और खोलने वाला उसे शीशा दिखाये वह उसे उसकी असली आवाज सुनाये और इसका बार–बार अभ्यास करवाये त बवह अपने असली रूप को समझ सकेगा और अपनी असली अवस्था को हासिल कर सकेगा।

सन्त मत में मौजूदा सत्गुरु की शरण की महिमा है। जो हम जिन्स हो और मौजूद हो, उसी को हम आसानी से प्रेम कर सकते हैं और उसकी शरण ले सकते हैं। वह हमारे दबे हुए प्रेमांग को उभार सकता है और वह ही हमारे मन के असन्तुलन को दूर करने में सीधी मदद कर सकता है। हमारी उल्झनों का समाधान कर सकता है। इसलिए मौजूदा सद्गुरु की जरूरत होती है। अगर सद्गुरु न मिल सके तो साधगुरु से मदद् लेने की हिदायत है।

5. **सन्त मत का पॉचवा सिद्धान्त** यह है कि सत्संग और आन्तरिक अभ्यास से जीव का उद्धार मुमकिन है और सरल है। सन्त मत के साधनमन के दोषों के मुताबिक है और उसकी बीमारी का पूर्ण इलाज है। जीव की खास तौर से तीन कमियॉ हैंः–

पहली बीमारी का इलाज सन्त मत में गुरु कृपा से 'जब्ज' के तरीके द्वारा 'कश्फी या वहबी' तौर पर किया जाता है। इस तरीके में सद्गुरु अपने प्रेम द्वारा शिष्य में प्रेम जागृत करते हैं और अपनी खींचने की ताकत से शिष्य की सुरत को निज स्वरूप तक खींचते हैं। इससे शिष्य का निज स्वरूप खुल जाता है और उसमें प्रेम जागृत हो जाता है और पूरी तरह उभर उठता है। जब शिष्य अपने अन्तःकरण को शुद्ध करके उसमें प्रेम उभारता है और भरता है तो यह तसफिया कल्ब कहलाता है।

दूसरी बीमारी यानी मन के असन्तुलन का इलाज शिष्य को गुरुमत रहकर खुद ही करना होता है। वह अपने की हालत पर निगाह रखता है और मन के गलत उभारों को दबाता रहता है। ये 'तजकिया नफ्स' कहलाता है। जब इस तरह शिष्य अपने चरित्र को सुडौल बनाते हुए अपनी सुरत को ऊपर चढ़ाने का अभ्यास करता है चह ''कस्ब'' है। इसे सलूक का तरीका कहते हैं।

तीसरी बीमारी यानि अह को दूर करने के लिए सच्ची दीनता से शरण में रहने की जरूरत है। जब गुरु कृपा से प्रेम जागृत होने लगता है तो गुरुमता दीनता और शरण दृढ़ होने लगता है। जब प्रेम उभर उठता है और मन सन्तुलन में आने लगता है तो अहं खुद ब खुद फना होने लगता है और साधक एक दिन निजी स्वरूप में स्थिति हासिल कर लेता है।

❋ ❋ ❋

सन्त के लक्षण

सन्त को हर शख्स से बल्कि प्राणीमात्र से अति प्रेम होता हें जैसे प्रभु को सबसे प्रेम है, ठीक उसी तरह सन्त को भी सबसे प्रेम होता है। यह इस तरह है जैसे बाप को बेटे से प्रेम होता है लेकिन यह बहुत मोटी मिसाल (उदाहरण) है। प्रभु का प्रेम बेगरजाना होता है, उसमें किसी किस्म की कोई गरज शामिल नहीं होती है। इस तरह से सन्त को भी प्राणी मात्र से बेगरजाना मोहब्बत (निःस्वार्थ प्रेम) होती है, जैसे प्रभु को प्राणी मात्र की भलाई मंजूर है, ऐसे ही सन्त को भी प्राणी मात्र की भलाई और उससे प्रेम मन्जूद है।

सन्त दो प्रकार के होते हैं। पहले वे जो सीधे धुर धाम से दुनिया में प्रभु की प्रेरणा से या अपनी खुद मरजी से दुनिया के प्राणियों की भलाई के लिए आते हैं। उनका मिशन ही यही होता है। ऐसे सन्त बचपन से ही जाहिर हो जाते हैं,और इसी काम में ही बचपन से लग जाते हैं फिर किसी बात की परवाह नहीं करते हैं। जैसी जरूरत समझते हैं, देश काल के लिहाज से वैसा ही अमल करते हैं और मिशन को पूरा करते हैं।

दूसरे सन्त इस तरह के हाते हैं कि घुरपद तक पहॅुचे हुए सन्त से प्रेम करते–करते खुद घुर पद तक पहुॅच जाते हैं। इनको काफी समय अभ्यास, तप व सत्संग में लग जाता है और करीब–करीब आखिरी वक्त में आकर कहीं धुर पद तक पहुॅचने की नौबत आती है। हर मुकाम को तय करना हर स्थिति से गुजरना वक्त ले सकता है, लेकिन अगर सन्त की कृपा बनी रहे तो वे धुर पद तक पहॅुच जाते हैं।

अक्सर सन्तों के प्रेमी इन दोनों श्रेणियों के सन्तों का मुकाबला कर बैठते हैं, जबकि अन्तर स्पष्ट है। पहली श्रेणी के सन्त शुरू से ही नफासत (सूक्ष्मता) कशफ–करामात (अन्तःज्ञान) लिये पैदा होते हैं। दूसरी श्रेणी के सन्तों में सूक्ष्मता और प्रभु का प्रेम पैदा होना एक लम्बे समय का मुआमला है अर्थात उन्हें बहुत समय लग जाता है। फिर वे पैदायशी होते हैं और ये अपनी मेहनत से धुरधाम पहॅुचते हैं। सूक्ष्मता में फर्क होता है। प्रथम श्रेणी के सन्तों के चेहरे पर तेज होता है। वह उनमें पैदाइश के वक्त से ही होता है। उसके सब आसार (लक्षण) बचपन से ही होंगे।

दूसरी श्रेणी के सन्तों में यह बात कई साल की मेहनत के बाद पैदा होगी और वह भी इस सूक्ष्मता की नहीं। यह कहा नहीं जा सकता हकि दूसरी श्रेणी वालों की कब यह हालत पैदा हो उसके बाद कितना हिस्सा आयु का बाकी रहे, जिसमें उनके चे आसान जाहिर हो सकें। अगर यह हालत मौत से दो एक साल पहले पैदा हुई तो सिर्फ एक दो साल ही प्राणी मात्र पर यह चीज जाहिर होगी।

प्राणीमात्र से प्रेम, प्राणी मात्र की सेवा तथा दया सन्तों के विशेष लक्षण हैं। जब तक सन्त में प्राणी मात्र से प्रेम पैदा नहीं होता है और वह प्रेम भी कैसा कि जिसमें कोई गरज (स्वार्थ) शामिल न हो, तब तक उससे न ज्यादा लाभ होता है और न उसके असर में ज्यादा ठहराव होता है और कोई न कोई स्वार्थ बीच में आकर माया रूप में खड़े हो ही जाते हैं और असल लक्ष्य से दूर जाकर फेंक देते हैं।

सेवाः—सच्ची सेवा वहीं करता है जिसमें किसी के लिए प्रेम होता है। सन्त अपनेमालिक के प्रेम में मस्त होकर मालिक का ही अंश सब में देखते हुए हर प्राणी मात्र की खिदमत तन—मन—धन से करता है। गरज कि हर मुमकिन तरीके से प्राणी मात्र की सेवा में लग जाता है और यह उसके जीवन का अंग बन जाता है।

दयाः— प्रभु दयालु है। सन्त अपनी हस्ती (अस्तित्व) को इस असल का अंश अनुभव करके दया का भण्डार बन जाता है। सन्त इतना दयालु बन जाता है कि जो तरंगें उसके जिस्म से निकलती है, वे भी दया से ही भरी होती है। गरज यह कि जो ईश्वरीय गुण हैं वे सब सन्त में या तो पैदाइशी होते हैं या धुर पद तक पहुँचते—पहुँचते पैदा हो जाते हैं।

इस जमाने में सहूलियत के लिहाज से सन्तों ने पतन्जलि योग के आसन, प्राणायाम को कम करके और नीचे के स्थूल चक्रों को छोड़कर इसे सूक्ष्म और भक्ति प्रधान बना दिया। इसी को राजयोग कहते हैं। इसके दर खिलाफ स्थूल शोधन क्रिया (नेती, धोती वगैरह) और आसन प्राणायाम प्रधान पतन्जलि को हठ योग कहते हैं। यह गृहस्थी के लिए मुश्किल है इसमें मेहनत ज्यादा और फायदा कम होता है।

पतन्जलि योग के आठ अंग हैं— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

यमः– ये पॉच हैं– 1. सत्य, 2. अहिंसा, 3. अस्तेय अर्थात चोरी न करना, 4. ब्रह्मचर्य, 5. अपरिग्रह अर्थात संग्रह न करना – जरूरत से ज्यादा चीजें एकत्र न करना।

नियमः– ये भी पॉच हैं– 1. शौच अर्थात शरीर की शुद्धि, 2. तप, 3. स्वाध्याय, 4. सन्तोष, 5. ईश्वर प्राधिध्यान अर्थात ईश्वर के आश्रित होना–परमात्मा पर भरोसा करना। यम नियम का पालन करने से चरित्र निर्माण होता है और साधक तमोगुण व रजोगुण से ऊपर उठकर सतोगुण पर आता है और ब्रह्म विद्या का अधिकारी बनता है।

आसनः– बहुत से आसन तन्दुरुस्ती अर्थात स्वास्थ्य रखने के लिए हैं, लेकिन अभ्यास के लिए एक आसन साधा जाता है जिसपर कुछ देर तक बिना हिले–डुले सीधे बैठे रह कर आन्तरिक अभ्यास किया जा सके। इसके लिए सुखासन, पद्मासन और सिद्धासन बताये जाते हैं। इनमें सुखासर सबसे आसान है। आन्तरिक अभ्यास के लिए सभी लोग इसको अपना सकते हैं।

प्राणायामः– यह रेचक, कुम्भक, पूरक यानि एक खास तरीके से श्वांस भरने, रोकने और निकालने का अभ्यास है, जो गृहस्थी के लिए कठिन है। सन्तों ने इसके बजाए जाप के तरीके अपनाये हैं, जिनमें प्राणायाम के फल के साथ–साथ अन्तर में परमात्मा का प्रेम भी जागृत होता हे।

प्रत्याहारः– मन को विचारों से खाली करना और ईष्ट से हटाने वाले विचारों को रोकते रहना प्रत्याहार कहलाता है।

धारणाः– गुरु मन्त्र या ईष्ट के नाम या रू‍ का चिन्तन करना धारणा कहलाता है। इसमें साधक को अपना चिन्तन ध्यान और ईष्ट तीनों का ख्याल रहता है।

ध्यान अवस्थाः– धारणा गहरी हो जाने पर ऐसी एकाग्रता आ जाती है जिसमें ध्याता अपने को भूल जाता है और उसे कर्म का ख्याल भी नहीं रहता, सिर्फ ध्येय बाकी रह जाता है। जब बाहरी ज्ञान लोप हो जाये, विचारों का उठना बन्द हो जाये और बीच–बीच में ध्येय की सुधि भी न रहे यानि चित्त निरोध हो जाये तो इसी को ध्यान अवस्था कहते हैं।

समाधिः– जब ध्यान अवस्था पुख्ता हो जाती है यानि ध्याता, ध्यान और ध्येय एक हो जाते हैं तो इस महवियत (तन्मयता) को निरोधावस्था कहते हैं जिसमें कोई वृत्ति नहीं रहती, मन और बुद्धि शून्य हो जाते हैं। यह ध्यानावस्था जब लगातार कुछ देर तक कायम रहती है तो एक डुबकी सी लग जाती है, जिसे समाधि कहते हैं। इसी चित्त निरोध और समाधि अवस्था में पहूँचने को महर्षि पतंजलि ने योग कहा है। सबसे नीचे जड़ समाधि है, जिसमें तमोगुण प्रधान रहता है और साधक अज्ञान में डूबा रहता है। इससे आगे बढ़कर ज्ञान समाधियॉ आती हैं जिनमें अद्‌भुत अनुभव होते हैं।

सन्तों के आन्तरिक साधनों का इशारा भक्ति मार्ग की साधना में भी मिलता है। सन्त तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में शबरी के प्रसंग में नवधाभक्ति को समझाया है जिसमें सत्संग, सद्‌गुरु और सुमिरन ध्यान भजन वगैरह आन्तरिक साधनों का जिक्र है। इस भक्ति योग में भक्ति की प्रमुखता के साथ कर्म और ज्ञानयोग के अंग भी शामिल हैं। सन्त तुलसीदास जी ने श्री रामचरित मानस में जो नवधा भक्ति का वर्णन किया है, उसके नौ अंग हैं।

नवधा भगति कहउ तोहि पांहीं, सावधान सुन धरु मन मॉही।
प्रथम भगति संतन कर संगा, दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।
गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुन गन, करई कपट तजि मान।।
मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा, पंचम भजन सो वेद प्रकासा।
षटदम सील बिरति बहु करमा, निरत निरन्तर सज्जन धरमा।।
सातव सम मोहि मय जग देखा, मोते सन्त अधिक कर लेखा।
आठव जथा लाभ सन्तोषा, सपनेहुॅं नहिं देखई परदोषा।।
नवम सरल सब सन छल हीना, मम भरोस हिय हरष न दीना।।

भगवान राम सबरी से कहते हैं– मैं तुझे नवधा भक्ति समझाता हूॅ। तू सावधान होकर सुन और अपने मन में धारण कर।

1. पहली भक्ति सन्तों का सत्संग।
2. दूसरी भक्ति है मेरे कथा प्रसंग में प्रेम।
3. तीसरी भक्ति है अभिमान रहित होकर गुरु के चरणकमलों की सेवा।
4. चौथी भक्ति है कपट छोड़कर मेरे गुण समूहों का गान करना।

5. पॉचवी भक्ति है दृढ़ विश्वास के साथ मंत्रजाप और भजन (आन्तरिक साधन) करना जो वेदों में प्रसिद्ध है।
6. छठी भक्ति है इन्द्रियों का निग्रह करना, शील यानि अच्छा स्वभाव या चरित्र होना और कर्मफल से वैराग्य यानि निष्काम होना और निरन्तर सन्तपुरुषों के धर्म (आचरण) में लगे रहना।
7. सातवीं भक्ति है जगत भर को समभाव से समझ में ओत–प्रोत देखना यानि अद्वैतभाव होना और सन्तों को मुझसे भी ज्यादा मानना।
8. आठवीं भक्ति है जो कुछ मिल जाये उसी में सन्तोष करना यानि राजी ब रजा रहना और स्वप्न में भी दूसरों के दोषों (बुराइयों) को न देखना।
9. नवीं भक्ति है सरलता और सबके साथ कपट रहित बर्ताव करना, हृदय में मेरा भरोसा रखना और किसी भी हालत में हर्ष और विषाद न होना।

इस ब्रह्म विद्या का प्रसार हिन्दू और मुसलमान सूफी सन्तों ने समान रूप से किया है। सन्तों ने कृपा करके इस जमाने के लिए साधना को काफी सरल और प्रभावकारी बनाया है, जिससे कि कम मेहनत और कम वक्त में बिना घरबार छोड़े हुए, ऊँची आध्यात्मिक हालतें नसीब हो सकती हैं। सूफी सन्तों ने साधना में चार बातों को मुख्य रखा है:–

1. आन्तरिम अभ्यास, 2. हृदय शुद्धि, 3. प्रभु का प्रेम, 4. प्रेमवर्षा यानि फैज या गुरु कृपा।

सूफी सन्तों ने हृदय शुद्धि को इसलिए मुख्य रखा है क्योंकि शुद्ध हृदय ही प्रभु के प्रेम का पात्र हो सकता है। असल में जिसका हृदय शुद्ध होकर प्रभु के प्रेम से भर गया हो, उसी को सूफी कहते हैं। इन रास्तों ने प्रेम की इसलिए मुख्यतया रखी है क्योंकि प्रेम ही आत्मा का असल स्वरूप है। आत्मा की प्रेमधार यानि चैतन्य धार या सुरत के कारण से सूक्ष्म से स्थल मण्डल में उतर कर दुनिया की चीजों से लगाव हेना ही बन्धन का कारण है। आत्मा की इस प्रेमधार में कशिश यानि आकर्षण है। आकर्षण केन्द्र (प्रीतम) की ओर सुरत शब्द के सहारे खिंचने लगती है। यही राधा कृष्ण का सच्चा प्रेम है। राधा आत्मा की उलट धारा है और कृष्ण उसका प्रीतम यानि आकर्षण केन्द्र है और मुरली की धुन सुरत शब्द है।

अपने आत्म बल से शिष्य का हृदय खाली कर उसमें प्रेम भर देना तवज्जह कहलाता है। हमारे सिलसिले के बुजुर्गो ने कृपा करके साधकों की आध्यात्मिक तरक्की के लिए इस साधन को इस्तेमाल किया है। जब–जब कृपा यानि फैज की प्रेमवर्षा होती है तो सन्त भक्तजनों को भी इस प्रेमवर्षा में शामिल कर लेते हैं, जिससे वर्षों की साधना के फल से कहीं ज्यादा आध्यात्मिक तरक्की हो जाती है। इस सिलसिले के सन्तों ने सूक्ष्म आन्तरिक अभ्यास और खासतौर से चक्रबेधन साधना की तालीम दी है, जिसकी वजह से इस सिलसिले को चक्रबेधन वंश परम्परा (नक्शबन्दिया खानदान) कहते हैं। परम् सन्त सद्गुरु महात्मा रामचन्द्र जी महाराज, फतेहगढ़ निवासी के गुरुदेव इस वंश परम्परा के महान सूफी सन्त हुए हैं, जिन्होंने यह घोषणा की कि सूफी सन्तों की आध्यात्म विद्या हिन्दु ऋषियों और सन्तों की ही विद्या है। आपने यह भी स्पष्ट किया कि आध्यात्मिक धार्मिक बन्धनों से ऊपर है– किसी भी धर्म सम्प्रदाय को मानने वाला अपने धर्मशास्त्र का पालन करते हुए इस विद्या को हासिल कर सकता है।

असल में सन्त किसी देश, जाति, सम्प्रदाय या धर्म के बन्धन से मुक्त सन्तलोक के वासी होते हैं जो अपने शिष्यों और अपने सिलसिले के अभ्यासियों को ही नहीं बल्कि दूसरे सिलसिलों के अधिकारी साधकों को भी फैजयाब करते हैं। आध्यात्मिक साधना में कई ऐसी मंजिलें हैं जिन्हें सन्तों की कृपा के बिना तय नहीं किया जा कसता। हमारे सिलसिले के साधकों को दूसरे सन्तों का आशीर्वाद भी भण्डारों और स्वप्न की हालतों में प्रत्यक्ष अनुभव होता है। जिन सन्तों का आशीर्वाद हमारे अभ्यासियों को हासिल हैं और जिसका सेवक ने खुद प्रत्यक्ष अनुभव किया है, वे हैं– सन्त कबीर साहब, गुरुनानक देव, सन्त तुलसीदास, श्री राधास्वामी जी, राय साहब सालिगराम जी महाराज, बाबा चरनदास जी महाराज, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, चैतन्य महाप्रभु, सन्त पलटू साहब, सन्त तुकाराम जी, सहजोबाई, मीराबाई, महात्मा गॉधी जी। इन महापुरुषों का लाख–लाख शुक्र है। परमात्मा इन पर अपना रहमोकरम (कृपा) बनाए रखे और सन्तमत साधना के अभ्यासी व सभी इनसे फैजयाब होते हुए अपने जीवन लक्ष्य को हासिल कें।

परमात्मा सबका कल्याण करे।

❀❀❀

ईश्वर प्राप्ति के साधन

इन्सान सब जीवों में अशरफुल मखलूकात (श्रेष्ठ) है क्योंकि उसमें और सब जीवों से ज्यादा सोचने विचारने का माद्दा है। इसकी तहकीकात इस रास्ते में सराहनीय रही है और इसने ही सब समझ पाया है कि जीवन का उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति है। ईश्वर प्राप्ति ही नहीं बल्कि वही हमेशा के लिए लय और स्थिति पैदा कर लेना ही इसका परम् धर्म–कर्तब्य वगैरह है और जितने भी काम उठाये गये हैं, वे सब ही इसी पर आधारित हैं।

ईश्वर प्राप्ति का रास्ता अथाह समुद्र है। इसके लिए कुछ लिखना बड़ी हिम्मत का काम है। इस रास्ते के बारे में थोड़ा बहुत उन्ही लोगों ने लिखा है जो इस रास्ते पर चले हैं। उसमें उन्होंने पिछले बुजुर्गों के अनुभव और उनकी किताबों से भी सहायता ली है और थोड़ा बहुत अपना अनुभव भी शामिल कर दिया है ताकि आगे आने वाले लोग इससे फायदा उठा सकें।

खाली आलिम (ज्ञानी) है तो उसकी बातों में वजन नहीं होगा। वाचक ज्ञानियों की तरह दूसरी किताबों की व्याख्या ही कर सकेगा और खाली आमिल (अभ्यासी) है तो दूसरे लोगों को अपनी जबान से मानूस प्रभावित न कर सकेगा। जो ज्ञानी भी है और अभ्यासी भी हैं, उन्हीं के वचन समयानुकूल प्रभावकारी ज्यादा हुए। फिर भी जो कुछ थोड़ा बहुत इस रास्ते में हासिल किया है, आगे जाने वालों के लिए लिख देना मुजायका (हर्ज) नहीं। इन्सान की जिन्दगी का आदर्श ईश्वर में लय हो जाना और फिर वहीं पहुॅचकर उस जगह स्थिति हासिल करना है। सिवाय परमात्मा के दूसरी सब चीजों से कतई बेताललुक कर लेना मिलाप और योग है। पहले सब चीजों से बैराग हो जावे और जो कुछ मौजूद है,उसकी तरफ से मुॅह मोड़ लेवें। उपासना में ऐसी और इस हालत पर आ जावे कि जहॉ रंग, रूप और
नाम न हो और उस गह लय हो जावे जो सबका आधार है और जो खुद किसी का आधार न हो, बल्कि अपना आप आधार है। ऊपर की हालत का पहला दर्जा बेखुदी है और तमाम हवास (सब इन्द्रियों) से गैवत (ध्यान हटाना) है जो मौत के समान है। मगर मौत में (हुजूरी) प्रेमानुभाव नहीं है, लेकिन इसमें हुजूरी ही हुजूरी है। इस लय अवस्था

का पहला दर्जा अपने आप में गुम हो जाना है। मौजूदा जमाने के बुजुर्गों और सन्तों ने ब्रह्म विद्या हासिल करने के लिए तीन चार बातें खास रखी हैं, और वो यह है–

1. सत्संग, 2. सतसंग–उन बुजुर्गों का जो ब्रह्मविद्या (चक्र विद्या) से पूरी वाकफीयत रखते हैं, 3. सत्नाम, 4. ध्यान।

1. सतगुरुः– जैसे कई धातुएँ पिघलाकर एक हो जाती हैं वैसे ही सत्गुरु महफिल से शिष्य सत्गुरु में मिल जाता है। जो शिष्य सत्गुरु से एक मन और एक चित्त होकर ईश्वर का ध्यान करता है, वह उसमें समाकर उसका रूप हो जाता है।

गुरु नानक देव एक साधक के उपदेश करते हैं कि अगर मन में मुक्ति की चाहना है तो सत्गुरु की चरण रज बन जाओ। पिछले जन्मों के अच्छे कर्मों से मनुष्य जन्म मिलता है। यदि इस मौके का फायदा उठाकर हम पूरे सन्तों की संगति में रहें तो ऐसी सच्ची करनी की युक्ति प्राप्त हो जाती है जिसके द्वारा परमात्मा के ऊँचे और सुन्दर महलों में वास हो जाता है।

मनुष्य हमेशा तीन प्रकार के कर्मों के जाल में फँसा रहता है। उसे इन तीनों गुणों की त्रिकुटी से छुटकारा कैसे मिले। सतगुरु की शरण के बिना त्रिकुटी नहीं छूटती है और न ही सहज की प्राप्ति होती है परन्तु सतगुरु के बताये हुए रास्ते पर चलने से प्रभु के महल में सहज सुख की पूँजी मिल जाती है।

वह परमात्मा का महल जीव के अन्दर ही मौजूद है, लेकिन सतगुरु के बताये हुए रास्ते पर चलकर पूरा अमल नहीं करता तब तक पापों और विकारों की मलिनता दूर नहीं होती। मन भी अपने वश में नहीं आता और न जीव अपने आपको पहचान सकता है। जब मनुष्य को ईश्वर की कृपा से सच्चा गुरु मिल जाता है तो सब कुछ उसे अपने अन्दर ही मिल जाता है। गुरु नानक देव भी कहते हैं कि इस रास्ते पर चलने वाले को सब आशाएँ त्याग कर अपने गुरु और उसके शब्द को अपने मन में बसा लेना चाहिए। मैं ऐसे सतगुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसने स्वयं परमात्मा के दर्शन कर लिए और दूसरों को भी करवाता है।

सत्गुरु अगर मिल जावें तो कुछ दिनों उनकी सहबत से लाभ उठायें और जिस तरह मुमकिन हो और जिस तरह वह रीझ सके, उसको रिझा लो। अपने लिए उनके दिल में जगह कर लें, ताकि उनको

आपकी याद आती रहे। खाते–पीते, चलते–फिरते, सोते–जागते वह हर वक्त आपके सामने रहें। इससे बहुत ही थोड़े दिनों में बहुत फायदा होगा और सारे अन्दर के चक्र बिना किसी सख्त जाप और मेहनत के खुद ब खुद खुल जावेंगे। अगर सदाचार भी साथ–साथ बनता गया तो बहुत मुमकिन है कि वर्षों की मेहनत का फायदा दिनों में ही पूरी तरह पहुँचा दें। एक परम् सन्त ने लिखा है कि अगर गुरु से राब्ता (सच्चा प्रेम) पैदा हो गया है तो बिला किसी मेहनत के सारे चक्र खुद–बखुद (अपने आप ही) खुल जाते हैं। किसी खास और चीज की जरूरत नहीं पड़ती। एक खानदान के बुजुर्गों ने इस पर बड़ा जोर दिया है।

राबता के अर्थः–

रूहानी (आध्यात्मिक) और बातिनी (आन्तरिक) निस्बत और ताल्लुक (सम्बन्ध) के हैं। ऐसे पीर तरीकत (गुरु) का राब्ता मुनासिब है जो धुर पद तक पहुँचा हो और वहाँ के प्रकाश वगैरह से पूरी पूरी वाकफियत (जानकारी) रखता है जिस मनुष्य की सोहबत और दर्शन से परमात्मा की याद आवे, तो जिस कदर हो सके उस पर निगाह रखे। यदि मौजूद है तो उसकी दोनों अबरू (भौं) के दरमियान नजर रखे और ऐसा राबता करे कि सिवाय उसके और किसी की हस्ती न रहे। अगर पूर्ण गुरु या सन्त सत्गुरु मिल जावे तो जिज्ञासु को चाहिए कि उसके दिल में अपने लिए जगह बना लेवे, यानि जिस तरह हो सके अपने गुरुदेव को रिझा ले और उनके साथ रजा (प्रसन्नता) हासिल करे।

राबता क्या है, ऐ ऐनक है पिसर।
नूरे बहदत, साफ आता है नजर।।

हे पुत्र राबता एक ऐनक है जिससे अद्वैत प्रकाश साफ दिखायी देता है, लेकिन यह राबता सिर्फ पीर कामिल (पूर्ण गुरु) का ही वाजिब (उचित) है– हर सिखाने वाले का नहीं। मेरा अपना निजी अनुभव यह है कि यदि पीर कामिल मिल जावें तो उसका राबता धुर पद तक पहुँचने में बहुत मदद देता है। फिर जिन्दगी भर कभी इस राबता को नहीं छोड़ना चाहिए। इससे ईश्वर प्राप्ति में बहुत कम मेहनत और समय भी बहुत कम लगता है।

पूर्ण गुरु की पहचान बहुत मुश्किल है। मोटी सी पहचान यह है कि उसके पास बैठने से ईश्वर की याद ऐसी आवे कि दुनिया के ख्यालात (विचार) सब दब जावें और धीरे–धीरे उसकी सोहबत ऐसा

असर करे कि ईश्वर की याद भी आवे, घट का रास्ता भी खुलता जावे और साथ ही सदाचार भी बनता जावे।

सत्संगः—

सत्संग उन बुजुर्गों (सन्तों) का जो सत्लोक तक पहुँच रखते हैं, उबसे बेहतर है। जैसा कि सन्त कबीर तथा अन्य सन्तों ने कहा है कि एक घड़ी का सतसंग भी वर्षों की तपस्या से बढ़कर है। इससे अनेकों संस्कार कट जाते हैं और इसके आनन्द की तुलना नहीं की जा सकती है।

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से पुनि आध।
कबिरा संगत साधु की, हरै कोटि अपराध।।

इसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास जी ने सत्संग की महिमा का बखान किया हैः—

सात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक अंग।
तुले न ताहि सकल मिल, जो सुख लव सत्संग।।

इसी तरीके से एक फारसी के शायर ने लिखा हैः—

हम नशीनी साअते बा औलिया,
बहतर अज सद साल ताअत बेरिया।

अगर अपना गुरु जीवित है तो जितना मुमकिन हो सके, उसका सत्संग उठा लें, क्योंकि उससे ज्चयादा हितैषी मिलना बाद को मुश्किल हो जाता है। लग लिपट कर तकमील (पूर्णता प्राप्ति) यदि वह कश्फी तरीका से (गुरु कृपा से अक्स रूप में) ही क्यों न हो, कर ही लें। बाद को बड़ी परेशानियाँ होती हैं और सैकड़ों अपने को अलग—अलग गुरुमुख कह निकलते हैं। सीधे रास्ते पर चलते हुए भी वे इन झगड़ों में पड़कर धोखा खा सकते हैं।

अगर आपने अपने गुरुदेव का राबता किया है और उनसे घनिष्ठ सम्बन्ध उनके जीवनकाल में हो गया है तो उनके बाद उसे रिश्ते (सम्बन्ध) और राबता को हरगिज—हरगिज न छोड़ें। मदद मौजूदा गुरुमुख से लें। परमात्मा ने चाहा तो अपने गुरुदेव और गुरुमुख दोनों ही से मदद मिलेगी और जो रास्ता उसका गुरुदेव ने कश्फी (गुरुकृपा)

तरीके से तय करा दिया था वह कस्बी तरीका (अभ्यास) से भी तय हो जायेगा।

गुरु जीवित हैं तो जब वे बात करें तो टिकटिकी लगाए उनके चेहरे को देखता रहे और जब वे तुम्हारी तरफ देखें तो अदब (आदर) से नीचे को ऑख कर लें। अगर टिकटिकी में प्रेम भी शामिल है तो काम बना बनाया है। गुरु की बैठक कम से कम सतलोक की होती है और चेहरे से सीधा तेज शिष्य के हृदय पर पड़ता है। हृदय साफ होकर उस प्रभु के दिव्य प्रकाश से भर जाता है और प्रभु के प्रेम से गद्‌गद हो जाता है। साथ ही अगर गुरुदेव पर ऊपर से फैज या अमीरस खासतौर से उतर रहा है तो बर्षों का काम सेकेण्डों में हो जाता है। इस रस में अगर गैर अधिकारी भी बैठा है तो अधिकारी बन जाता है, बशर्ते कि नफरत (राग द्वेष) लिए न बैठा हो। इसी कारण से सब लोगों ने ही एक लम्हा (सेकेण्ड) के सत्संग की महिमा कही है।

इत्तफाक से अगर गुरुदेव जीवित नहीं हैं और कोई हमदर्द गुरुमुख भी नहीं मिल पाए तो उसको चाहिए कि किसी ऐसे साधु का, जो त्रिकुटी तक पहुॅच रखता हो, सत्संग उठा लें। अपना जाप बड़े भाव और श्रद्धा से करता रहे। ईश्वर दया करेंगे। पूर्ण आशा है कि उसका काम जल्दी ही उसी तरह हो जावेगा जैसा कि ऊपर लिखे हुए शख्स का काम पूरा होता है। इत्तफाक से यह सत्संग भी न मिले तो जो अपने गुरुभाई उस रास्ते पर चलने वाले हैं, उनसे सोहबत रखे तो दोनों की मेहनत से आगे के चक्र खुल सकते हैं। बाकी परमात्मा की मर्जी पर कनायत (सन्तोष) करें।

सत्‌नामः—

परमार्थ के रास्ते पर कायम (स्थिर) रहने और हर हालत जो परमार्थ में हासिल होती है, उसके कायम रखने और आगे का रास्ता खोलने के लिए जाप बहुत बड़ी मदद करता है, साथ ही वक्त पर अपने कर्तब्य की याद दिलाता है।

यह सिर्फ दो तरह पर हैः—

1. नफी— असबात (नेति—इति)

2. मुजर्रिद असबात (दिल का जाप)

नफी असबात सलूक (क्रमबद्ध चढ़ाई) का फायदा देता है औरमुजर्रिद असबात जजबा (प्रेमभाव) के वास्ते मुफीद (लाभदायक) है। कुछ सन्तों और बुजुर्गों ने जजबा को ज्यादा पसन्त किया है क्योंकि जज्ब (प्रेम) इस

रास्ते के तय करने में बहुत मददगार है। नफी–मानी (अर्थ) है– सब दुनियावी अशिया (चीजों) को अपने हृदय से नफी (खाली) करना। जिसे इस तरह कह सकते हैं कि कुछ नहीं है, सिवाय परमात्मा के। यानि नाभि के दाहिनी तरफ कह सकते हैं कि कुछ नहीं है, सिवाय परमात्मा के। यानि नाभि के दाहिनी तरफ से इस ख्याल को दिमाग (मस्तिष्क) तक उठाते हैं कि कुछ नहीं है, दाहिने कन्धे के ऊपर कहते हैं सिवाय और हृदय पर बड़े जोर से जरब (ख्याल से ठोकर) लगाते हैं, परमात्मा या ओम् की। नाभि से उठाने से पहले नीचे के होठ को ऊपर के होठ से लिा लेते हैं और जबान तालू से लगा लेते हैं। दम (सांस) को रोक लेते हैं। मगर इस कदर कि सांस बहुत तंग (घुटन) न हो जावे। इसमें दिल को सब अंदेशों (अस्तित्व) के भी नेस्त और नाबूद (नेति) समझते हैं और परमात्मा की हस्ती पर असबात यानि इति करते हैं। इस जमाने में यह भी जरा मुश्किल (कठिन) सा सिद्ध होता है, बाकी जो साहेबान करना चाहें और उनकी समझ में न आया हो तो पूछ सकते हैं।

मुसलमान साहेबान 'ला इला –इलालिल्लाह' का जाप करते हैं। अपनी ताकत हिम्मत (इच्छाशक्ति) के अनुसार और स्वास्थ्य का ख्याल करते हुए ही करना उचित है। शुरू में ग्यारह बार काफी है। बाद को जैसा मुनासिब समझें, बढ़ा सकते हैं। बहरहाल इक्कीस मर्तबा बहुत काफी है।

दूसरा जिक्र (जाप) मुजर्रिस असबात है जिसे जिक्र इस्म जात (मानसिक जाप) या जिक्र खफी भी कहते हैं।

इसकी तरकीब (विधि) यह है कि मुॅह बन्द करें और जबान तालू से लगायें और ऑखें बन्द करें। कल्ब (हृदय) की तरफ मुतवज्जह होकर (ध्यान जमाकर) अल्लाह के इस्म जात (ईश्वर का नाम) को नाभि के नीचे से खींचकर दिमाग की झिल्ली तक पहॅवावे और जो बाहर की तरफ सांस आता है, उससे हू की जरब (ठोकर) दिल पर लगाएं और दिल से जिक्र (जाप) में गशगूल हो जायें और खुदा की जात (परमात्मा) को ख्याल में रखें, या अपने पीर का तसव्वुर (ध्यान) करें बाज मशायख (गुरूजन) इस जिक्र के बाद तूही मकसूद (लक्ष्य) और तूही माबूद (पूज्य) कहना बताते हैं। जिक्र के वक्त सांस को रोकना अजीब आनन्द पैदा करता है। इससे इतमीनान दिल (शान्ति) हासिल होती है। कल्ब की तरफ ऐसे मुतवज्जह (ध्यान)करें कि जिस तरह बिल्ली चूहे के बिल पर बैठकर ताक लगाती है।

हिन्दू साहेबान– ओउ्म् का जाप हृदय पर जहॉ दिल की धड़कन होती है, करते हैं। बाकी सब बातें ऊपर लिखी हुई करते हें, सिर्फ नाम लेते वक्त बजाए अल्लाह के ओउ्म कहते हैं।

जिक्र और फिक्र (जाप एवं मनन) खास अमल (साधन) हैं, जो बे खुदी पैदा करने के लिए जरूरी है। यही अभ्यास में बहुत मददगार (सहायक) है।

बेखुदी का अर्थ है– अपने आपको भूल जाना।

वे चीचें अख्तियार की जायें जिनसे बेखुदी पैदा करने में मदद मिले। वे चीजें छोड़ दी जायें जो बुखुदी पैदा होने में रुकावट डालें।

जिक्र–जाप इसकी कई किस्में हैंः–

अ– एक जिक्र–जिसके होठ और जबान (जिब्हा) से किया जाता है।

ब– दूसरा जिक्र–दिल का है, जो मानसिक है। यह जाप बुरे ख्यालों–दुविधाओं और वहमों (भमों) को दूर करने वाला है।

स– एक तरह का जाप और है जिसको जिक्र सिर (हृदय क्षेत्र में हृदय चक्र से ऊपर के चक्र पर) जाप कहते हैं।

इसका जाप करने में अन्तर इस तरह भर जाता है कि अगर कोई ख्याल और खतराह दिल में जाने का इरादा भी करे तो हरगिज न आ सके। इससे मालूम होता है कि जिक्र सिर जिक्र कल्ब का असर है। हजूर दायमी (सदैव आनन्द) इस चक्र के जाग्रत होने की वजह से होता है। यानि एकटक तवज्जह का लग जाना और सिवाय एक चीज के सब चीजों का ख्याल भूल जाना, इसी चक्र की खसियत (विशेषता) है।

जाप बहुत से हैं। हर सन्त ने जाप को अलग–अलग तरीके और अलग–अलग जगहों से शुरू करने को कहा है, लेकिन कुछ जाप ऐसे निचोड़ हैं जिनसे फायदा ज्यादा मेहनत कम और वक्त की किफायत (बचत) है।

अ– इसमें दातों को दबाकर जबान को उलटकर तालू से लगा लेते हैं और फिसइस्म आजम (परमात्मा का नाम) यानि ओउ्म या अल्लाह का जाप दिल में करते हैं।

ब– ओउ्म का जाप नाभि से दिमाग तक उठावें– पहले सीधे कंधे पर, फिर बाईं तरफ हृदय पर जहॉ दिल की धड़कन हैं, वहॉ पर जोर से ओउ्म नाम की ठोकर देते हैं।

स– ऊपर की तरह की बाज बुजुर्ग राम राम का जाप करते हैं। तरकीब (विधि) जाप वहीं है जो ऊपर कही गयी है।

द– चौमुखी जापः–

1. 'या फताहो' (फतेह देने वाला) दायें कन्धे पर ख्याल से कहते हैं।
2. फिर 'या रज्जा–को' (रोजी देने वाले) बायें कन्धे पर ख्यात से कहते हैं।
3. फिर 'याबहावो' (पालन पोषण करने वाले) दिमाग पर ख्याल से कहते हैं।
4. फिर 'या अल्लाह' (परमात्मा ही है) हृदय पर जहॉ धड़कन होती है, वहॉ ख्याल से ठोकर देते हैं।

इस चौमुख जाप में ऊपर से लिखे चारों स्थानों पर राम का उच्चारण कर सकते हैं।

ये चारों जाप निचोड़ हैं और दिनचर्या में अगर शामिल कर सकें तो बहुत लाभकारी सिद्ध होते हैं।

ध्यानः–

ध्यान या मराकबा के अर्थ मुहाफिजत (ऐसी धारणा) करने के हैं ताकि सिवाय परमात्मा के अन्य ख्याल दाखिल न हो और तमाम अशिया (सभी चीजों) बल्कि अपने वजूद (अस्तित्व) में भी कतई बेताअल्लुक (सम्बन्ध रहित) हो करके जजबात गैवी (पराभाव) व फैज इलाही (परमात्मा की कृपा) की प्रतीक्षा में रहे। इसका एक यह तरीका है कि परमात्मा को दिल की बातों और बातिन के अन्तर के हाल का जानने वाला जाने और सब प्राणियों के कर्म और हर एक चीज पर उसको रकीब और महीत (मालिक) समझें ताकि जाहिर और बातिन (बाहर और अन्दर) में कोई हरकत नाजेवा (गलत कर्म) सरजद न हो। जब जाकिन (जाप करने वाले) के दिल पर यह हालत गालिब हो (छा जावे) कि मेरे मालिक ने हर एक जगह और हर चीज को घेर रखा है और वह दया दृष्टि रखने वाला है और दिल में बगैर किसी प्रार्थना व अक्षर के, अल्लाह या ओउ्म का ध्यान करता है तो दिल इस ख्याल में ऐसा डूबता है कि बाहर की तरफ नहीं झुकता और वजूद बेहिस को (अपना अस्तित्व

खो) जाता है। ऑख खोले हुए भी किसी को नहीं देखता। उस वक्त जो चीज उसके सामने आती है, उसी का रंग पकड़ जाती है।

जिस तरफ देखूॅ मैं उठा के निगाह, तू ही आवे उधर नजर या रब।

इस मराकबा की सीमा और अद्‌भुत अवस्था जो बुद्धि से परे हैं, इसको फनाए फना (पूर्ण लय अवस्था) भी कहते हैं। अगर परमात्मा इस स्थिति से तरक्की बख्शे (कृपा कर आगे बढ़ाये) तो फिर बका है अर्था ऐसा जीवन है जिसमें ज्ञानसहित पूर्ण प्रेम सहज लय अवस्था बनी रहती है।

मौजूदा जमाने में सिर्फ इन तीन चक्रों पर ध्यान जमाते हैंः–

1. हृदय चक, 2. आज्ञा चक, 3. चिकुटी।

लेकिन बाज बुजुर्ग (सन्त) नाफ (नाभि चक्र) से भी वकतन बवकतन(समय–समय पर) मदद लेते हैं। हृदय क्षेत्र में पॉच कमल कल्ब, रूह, सिर, खफी व अखफी है। इनमें सिर्फ कल्ब पर ध्यान लगो से और अजपा जाप, जिक्र खफी (मानसिक जाप) करने से बाकी पॉचों लतीफा (कमल) खुद–बखुद (स्वयं) खुल जाते हैं।

नोटः– जिक्र खफी का अर्थ है–वह जाप जिसको दूसरा कोई न सुने/ वह स्वयं ही सुने और जिस नाम का जाप करता है, उसका अर्थ भी खूब समझता हो।

इन पॉचों लतीफों (कमलों) का सम्बन्ध ऊपर के जितने सूक्ष्म पद कमल हैं, उन सबसे हैं। मेरा अनुभव यह है कि इन पर ध्यानजमाने से त्रिकुटी बहुत जल्द खुल जाती है, जो भक्ति का आगाज (शुरुआज) है। त्रिकुटी पर जड़ और चेतन की गॉठ खुल जाती है और भक्ति निर्मल हो जाती है। सीधा टकराव सुन्न–महासुन्न से हो जाता है। इधर हृदय चक्र के साफ होते ही नीचे के नाफ (नाभि) इन्द्रिय, गुदा सब जाग्रत हो जाते हैं। उधर आज्ञा चक्र और सहस्त्र दल कमल जाग्रत खुद–बुखद हो निकलते हैं। इस तरह से जो अपनी तपस्या से युगों में फायदा होता है, वह दिनों में हो जाता है और अभ्यासी अपनी हालत को देखकर भौचक्का (आश्चर्य चकित) सा रह जाता है। वह हर वक्त प्रेम में डूबा सा रहता है, क्योंकि हृदय चक्र का (जो पिंडी का मुकाम है) त्रिकुटी से (ब्रह्मंडी मन का मुकाम) सीधा सम्बन्ध हो जाता है।

आज्ञा चक्रः—

यह जीव आत्मा का जाग्रत अवस्था में हेडक्वार्टर है। अक्सर सन्त ध्यान इसी चक्र पर लगाते हैं। यहाँ ही ख्यालात को रोते हैं। यहाँ थोड़े ही दिनों में शान्ति पैदा हे जाती है लेकिन मेरा अनुभव यह है कि रूखापन शुरू में होता है। प्रेम का रस जो अभ्यासी को उत्साह देता है, नहीं होता है। चित्त भी मुश्किल से एकाग्र होता है। फिर भी यह बात सिखाने वाले पर छोड़ दें। क्योंकि वह पिछले संस्कारों से वाकिफ (जानकार) होता है। वह यह भी जानता है कि उसका कौन सा चक्र पहले से जाग्रत है। जैसे ही अभ्यासी गुरु के सामने आता है तो उसका वही चक्र साफ प्रकाशित मालूम होता है जिसपर वह पहले कुछ कमाई कर चुका है। गुरु हर चक्र के रंग रू‌प और वहाँ की आवाज से वाकिफ होता है,उसके आगे आने वाले को वह जाग्रत कर देता है।

त्रिकुटीः—

कुछ सन्त त्रिकुटी पर ध्यान लगाते हैं लेकिन शुरू में यह मुश्किल से खुलता है और बाज वक्त (कभी—कभी) वर्षो की मेहनत बेकार हो जाती है। मेरा अपना अनुभव यह है कि सिर्फ हृदय चक्र में कल्ब को ही खूब मजावलत करता (बार—बार शब्द की ठेस देता) रहे। इससे ऊपर से नीचे तक के सभी चक्र अपने आप खुल जाते हैं। चाहे वह जाहिरदारी (जागृत अवस्था) में खुलें या ख्वाब में खुलें, खुल अवश्य जाते हैं। हर एक का रंग रूप और वहाँ का एक शब्द साफ मालूम हेता है।

ये हालतें उन अभ्यासियों के तजुर्बात (अनुभव) बढ़ाती है जो गुरुमुख हैं और जिनके जिम्मे तालीम (आध्यात्मिक शिक्षा का काम) है।

ध्यानः—

सिर्फ हृदय चक्र पर ओउ्म शब्द का या औउ्म के पूर्ण प्रकाश का ही मुनासिब है। जाप किसी नाम का जो सत्‌नाम है, कर सकता है। शुरू में सिर्फ एक ही नाम का जाप और एक ही नाम का ध्यान ज्यादा मुफीद साबित (अधिक लाभकारी सिद्ध) होता है। बाद को यह हालत हो जाती है।

जाप मरे अजपा मरे, अनहद हूँ मर जाय।
सुरत समानी शब्द में, ताहे काल नहिं खाय।।

बाज औकात (कभी—कभी) जहाँ जाप शुरू किया नहीं कि फौरन ऐसा ध्यान लगना अपने आप शुरू हो जाता है कि सब माला वगैरा हाथ से छूट जाता है।

अभ्यासियों के लिए प्रार्थना, स्वाध्याय, जाप व ध्यान का नियम

——————:——————

1. रामायण पाठ—11 चौपाई कम से कम करें।
2. सिर्फ ओउ्म का जाप कम से कम 101 दफा करें। इस जाप में जबान न हिलाई जाए, मन में किया जाये। ख्याल हृदय चक्र पर रहे और ओउ्म की ठेस भी लगती रहे।
3. ओउ्म शान्ति का जाप नित्य नियम से कम से कम 101 दफा करें और महात्मा रामचन्द्र जी (लाला जी महाराज) को अर्पण करें।
4. ओउ्म शान्ति का जाप 101 दफा सभी बुजुर्गों (सन्तों) के लिए करें।
5. 101 दफा गायत्री जाप करें।
6. छोटी सी कोई प्रार्थना कहें जो दिल की आवाज हो महज गाना न हो।
7. आधा घण्टा ध्यान लगाएँ। शुरू करते समय ओउ्म शब्द का ही ध्यान आज्ञा चक्र पर या हृदय चक्र पर करें।
8. यदि समय बचे तो उस समय को संतों की जीवनी तथा धार्मिक पुस्तकों को पढ़ने में लगायें।

दस आवाजों का वर्णन जो सन्त मत के अभ्यासियों को सुनाई देती हैं:—

1. झींगुर की सी झनकार—जब यह आवाज सुनाई देते हैं तब बदन के बाल खड़े हो जाते हैं।
2. चक्की के चलने का सा घर—घर शब्द —बदन में काहिली और एक अजीब किस्म की सुस्ती पैदा होती है।
3. आवाज घन्टा— इश्क और मोहब्बत का जोश दिल में आता है। ''गाफिल तुझे घड़ियाल यह देता है मनादी—करदों ने घड़ी उम्र की एक और घटा दी।'' घन्टे की आवाज शिव नेत्र से सुनाई देती है।
4. आवाज शंखः— नाफूस—मिस्ल नशे से सिर घूमने लगता है और मगज में से खुशबू आती है। यह शब्द सहस्त्र दल कवंल से सुनाई देता है।
5. आवाज मृदंगः— आबेहयात (अमीरस) अमुअलदमाग (मस्तिष्क) से तले को उतरता है। यह शब्द गगन या त्रिकुटी से सुनाई देता है— ओउ्म—ओउ्म।
6. आवाज तालः— वह आबेहयात (अमीरस) अमुअलदमाग (दिमाग की चोटी) से उतरकर हलक में पड़ता है। यह शब्द दसवें द्वार सुन्न से सुनाई देता है।

7. आवाज ने यानि बॉसुरी या मुरली— कश्फ (अन्तःज्ञान) खुलता है और जमीर खलायक पर आगाही होती है और दूर—दूर की आवाज सुनी जाती है।
8. आवाज मृदंग या पखावजः— ना दीदा अशिया (अदृश्य) को देखता है। इस शब्द के सुनने से साधक का अन्तःकरण प्रकाशित हो जाता है और आवाज जो तमाम रचना के दिल से बरआमद होती है, समाअत कर (सुन) सकता है। यानि नाद भीतर बाहर सब जगह सुन पड़ता है। यह शब्द भंवरगुफा से सुनाई पड़ती है।
9. आवाज नफीरी खुरदः— इसके सुनने से सुनने वाला ऐसा सूक्ष्म हो जाता है कि जहॉ चाहे उड़कर जा सकता है और आवाम की ऑखों से महजूब (छिपा) हो सकता है। वह सबको देख सकता है मगर उसको कोई नहीं देख सकता है। वह देवताओं को भी देख सकता है यानि राहे मलकूत (फरिश्ते) नजर न आने का परदा जो उसकी ऑखों पर पड़ा हुआ है वह उठ जाता है। यह सत्लोक से सुनाई देता है।
10. बादल की गरजः— यह आवाज अनाहद है। इसके सुनने से ब्रह्म से मशगूल कुल (पूर्ण लय) हो जाता है। तमाम नेक व बद ख्याल और अकली व कश्फी (अपरा व परा बुद्धि) और सिद्धि शक्ति—करामात—माजरात (रहस्य) को बच्चों का खेल समझता है।

इन आवाजों के सुनने में अक्सर फर्क होता है यानि किसी को पहले कोई आवाज सुनाई देती है और दूसरे को कोई और आवाज सुनाई देते हैं। मगर इस आवाज के सुनने के क्रम में फर्क पर कोई ध्यान नहीं देना चाहिए। बायें तरफ जो शब्द सुनाई देता है, उसकी तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए और न उसको सुनना चाहिए। जोत स्थान — जहॉ सिद्धि की प्राप्ति होती है, वहॉ से बचकर निकल जाना चाहिए। फिर मन्जिल मकसूद (लक्ष्य) तक प्राप्ति आसान है।

कभी—कभी प्रेमी भक्त की मारा मार तरक्की होती है। वह प्रेम में न कुछ सुनता है और न देखता है। हालॉकि हालते सब उसपर किसी न किसी वक्त चाहें वे क्षणिक मात्र हों, सब चक्रों की नीचे से ऊपर तक गुजरती हैं, जो कभी ख्वाब में और कभी अभ्यास की हालत में अनुभव होती है। ये सब चीजें काबिल कद्र हैं, परन्तु है महज रास्ते की। हालांकि ये हालतें जब गुजरती हैं, तब अभ्यासी का थोड़ा उत्साह बढ़ जाता है।

तालीम (शिक्षा) ख्वाजगान खानदान नक्शबन्दिया ग्यारह बातों पर आधारित है:–

1. होश हरदम:– इसका मतलब है कि हरदम बेदारी और होशियारी रखें और जिक्र जुबानी या जिक्र वातिनी (मानसिक) याद एक सेकेण्ड भी न भूलें और जो आप चाहें वह जुबान से हो चाहे हृदय से हो, दोनों में हुजूरी रहे। परमात्मा का ख्याल सामने हो और जाप के वक्त गफलत न हो।
2. नजर बरकदम:– मतलब है कि चलते–फिरते नजर पुश्त (पैरों पर) रहे ताकि ना मरहम या गैर–जिन्स (पराई स्त्री) पर न पड़ने वाजे, क्योंकि इंसान के जिस्म में बड़ा तेजतर शैतान का वजूद ऑख ही है, क्योंकि और हवासों (इन्द्रियों) से जब तक कोई चीज मसलन छुआ न जाये इदराक (ग्रहण) नहीं कर सकते, मगर ऑख वह शै है कि जो दूर और नजदीक से अपना काम लेती हैं।
3. सफरदरवतन:– सफर (यात्रा) दो तरह का होता है। एक तो जाहिर बदन से मलसल तीर्थयात्रा,दूसरा सफर बातिन (दिल) से होता है कि हर लम्हा (क्षण) हर सेकेण्ड यह ख्याल रखें और चेक करें कि मेरे दिल में किस कदर मुहब्बत खलके (दुनिया की भावना)अल्लाह यानी ईश्वर की कितनी मुहब्बत मेरे दिल में और अलावा ईश्वर के कितनी मुहब्बत दूसरों की मेरे दिल में बाकी है।
4. खिलवत दर अंजुमन:– (सभा में भी एकान्त) यानि जाहिर बखल्क (पब्लिक) मशगूल हो और बातिन बहक सुजाना यानि ईश्वन की तरफ जिक्र (जाप) का ऐसा गलवा दिल पर हो जाए कि जाकिर बाजार में आये जाये या गैर आवाजें सुने तो भी उसको जिक्र की सुनाई दे।

5. याद कर्द:– (याद करना) कहते हैं जिक्र करने को ख्वाह जिक्र जुबानी या दिली नफी असवात हो या फकत असवात यानी इस्म अल्लाह (ईश्वर का नाम) जैसा मुर्शिद तालीम करे। जिक्र से मकसूद यह है कि दिल हमेशा हक सुजाना ताला ईश्वर से आगाह रहे। मुहब्बत और ताजीम के साथ अगर ये आगाही पहले जमैयत (सभा) की सुहबत में हासिल हो जाए तो खुलासा जिक्र (जाप) का हासिल हो गया।

6. बाज गश्तः– जिक्र (जाप) को खालिस बना देता है। जाकिर के दिल में जो सरूर (प्रसन्नता) खातिर सेवा से पैदा होता है तो उस पर मगरूर (घमण्ड) हो जाता है और इसी को मकसूद जिक्र करार देता है। इसलिए इस्मत अल्लाह भगवान् का नाम ओउ्म् को 9 या 15 या 21 मरतबा दिल से कहकर जुबान से यह मनाजात (प्रार्थना) करें कि ऐ खुदा ओ करीम तू और तेरी रजा मेरा मकसूद (ध्येय) है। मैंने दुनिया व आखिरत को तेरे लिए तर्क छोड़ दिया। तू अपी मुहब्बत मुझपर तमाम कर। यानि दिल को बार–बार या सिवाए हक से (दूसरों से) दूसरों से हटाकर रजू अल्हाह करे (ईश्वर में लगावे)।
7. निगह दाशतः– खतरात नफसानी (इन्द्रियों के बचाव) और वसूसों (ख्यालों) से दिल की हिफाजत करके नलखाए रास–खाखलू (सच्चाई) दिल का हासिल करें। खतरा और ख्याल को हब्तदाए (शुरू) जहूर में ही रोक देवें, वरना जब जाहिर हो चुकेगा तो नफ्स उस तरफ माइल व रागिब (झुकना) हो जायेगा।

खतरात चार प्रकार के हैंः–

(अ) खतराए शैतानी (बुरे विचार) जो रगवत मासियत (गुनहगारी) के वास्ते हाता है।
(ब) खतराए नफसानी जो मतालिब शहवत (काम) के वास्ते होता है।
(स) खतराए मलकानी (शुभ) इलहाम (आकाशवाणी) को कहते हैं।
(द) खतराए रहमानी (ईश्वरीय) गफलत से निकलना और ताअत (प्रार्थना) की तरफ रागिब होना।

अव्वल दो खतरात फिसाद की जड़ है। उनका मौकूफ (खत्म) होना फनाफिलकल्ब है (हृदय साफ हो जाये)।

8. **याददाश्तः–** बिला जरिया अलफाज व खतलियात (विचार) ऐसी खालिस तवज्जुह जात मुकद्द (ईश्वर) की तरफ वातिन (दिल) में लगाए कि बवजह जौक (खुशी) दबाम (हमेशा) आगाही हासिल हो जाए। ख्वाजा अब्दुल्ला इसरार ने फरमाया है कि यदि कर्द जिक्र में तकल्लुक से मुराद कहे और बाजगश्त से मुरादखुदा की तरफ रगवत (झुकाव) होना कि तू ही मेरा मकसूद है।निगहदाश्त इस रूजू (ध्यान) की महफिल (रखवाली) का नाम है और याददाश्त निगहदाश्त (नजर रखने वाला) के रसूख से मतलब है।

9. बकूफ जुबानी मुहासिवाः– (जुबानी जाप) नफ्स से मुराद है। सालिक (साधक) हर वक्त अपनेहाल से वाकिफ रहे और अगर हालत खुली हुई है तो शुक्र करें और अगर कब्ज हो (खुली न हो) तो तोबा करें (मुआफी मॉगे) जिक्र करते वक्त हर साअत (हर घड़ी) अपनेदिल में ताअम्मुल (बरदाश्त) करें कि गफलत (भूल) तो नहीं आ गयी और अगर गफलत आ गयी हो तो उसको दूर करें।

10. वकूफ अद्दीः– (एक जापदो से तकसीम न हो) से जिक्र कल्बी बरिआयत ऊदू (एक) मुतलक मुराद है। यानी एक सांस मे तीन या पॉच, सात या इक्कीस मरतबा तक जिक्र करें, इससे जिक्र कल्बी में खवातिर (खतरे ख्याल) तुतफर्रिक का दाफिया (खत्म होना है) यानि मुतफर्रिक खतरात खत्म हो जाते हैं। इसमें बहुत कहने से मुराद नहीं है, बल्कि जिस कदर कहे बकूफ और हजूरी (ईश्वर की मौजूदगी) के साथ कहें।

'पेशहक इकराना अजरूए नियाज व कि उम्र बेनियाज अन्दर नुमाज''

11. वकूफ कल्बी (दिल का जाप)– यह दो तरह में बोला जाता है एक यह कि जिक्र के वक्त मजकूर (परमात्मा) से आगाह हो, ताकि सिवाए हक (ईश्वर का पाना या देखना) भी कहते हैं। दूसरे यह कि जाकिर (जाप करने वाला) दिल से वाकिफ हो यानि दिल मजाजी की तरफ जो कतराए गोश्त सनोवरी शक्ल का बाई तरफ जेरे पिश्तान ही मुतवजजह रहे और उसको जिक्र में मशगूल करके मजकूर (जिक्र किया हुआ) से गाफिल (बेहोश) न होने दे।

इन मजकूरा वाला (उपरोक्त) इस्तलहात में से पहली आठ ख्वाजा अब्दुल खलिक से (बताई हुई) मनकूल है और पिछली 3 ख्वाजा नक्शबन्दी से मुरब्बी (राय से) है।

लतायफ सित्ता

ख्वाजगान खानदान नक्शबन्दिया का दारोमदार लतायफ सित्ता (चक्रभेदन) पर है, उसको तलायफ अशराह भी कहते हैं। उसकी सूरत इस प्रकार हैः–

बतरीक कदीम अज बुर्जगानसलफ (पुराने)

1. कल्ब (तल्व)– जरद रंग
2. सिर्र– रूई की तरह सफेद रंग
3. अखफी– सबज रंग
4. खफी– स्याह रंग
5. रूह– सुर्ख रंग

नफ्स (वासना) मुकाम दिमाग रंग निहायत सफेद मानिंद माहताब (चॉद) (विवरण सहित चित्र आगे है)

फकीर लोग (अहले तस्वफ) कहते हैं कि नफ्स मुब्तदाई शहवत और लज्जाते हिस्सी है यह एक लतीफा बुखार है जो जोफ कल्ब से बजरिए हरारत गरीजी पैदा होता है और अरूक (नसों) की रूह से बदन के तमाम एजा व अजजा में जारी है। बदन की हिस–हरकत इसी से है और भूखे व सैरी और कहिसों हवा और तमाम नफसानी सिफात इसी से कायम है। रूह हैवानी इतब्बा के नजदीक यही है। रूह इनसानी का ताल्लुक बदन के साथ इसी नफ्स के जरिए से है और लताफत (सूक्ष्म) और कशाफत (स्थूल) में दोनों तरफ की मुनासिब (कनेक्शन) की वजह से रूह और वदन दरम्यानबतौर बरजख (पर्दा) के हैं और रूह का ताल्लुक नफ्स के साथ ऐसा है जैसे मर्द का औरत के साथ। इन दोनो के मिलने से एक लतीफा पैदा हुआ है जिसको कल्ब कहते हैं। वह इन दोनों के दरम्यान मतल्लिक और मुनकदिव है। दोनों में से किसी एक के एहकाम के गलवे की वज से इसी का तावै है। महसूसात का मदरक नफ्स है और माकूलात का मदरक रूह है और माकूल व मससूस से मुरक्कब अशयॉ का मदरक कल्ब है और ऐसी अशयॉ जो न माकूल है और न महसूसजै से राजात सिफाते इलाही। इनके इदराक के वास्ते जो लतीफा है वह रूह और सिर और खफी अखफी के नाम से मॉसूफ है। नक्श ए वाला में जो इन लतीफों के मुकामात में जरा फर्क है उसकी दो वजूहात हैं। अव्वल यह है कि वाज ने जाए आगाज लतीफा ली है और वाज ने उस मुकाम मुलवस्सित (बीच)। मगर यह सिर्फ जाहिरी व

इवारती फर्क है वैसे हालतें बतून में एक ही बात है और ठीक मुकाम नजर आता है। दोयम एक जगह नफ्स का मुकाम जेरे नाफ है और दूसरी जगह दिमाग उसकी वजह यह है कि इन्सान दस लताइफ से बना है। इनमें से पांच आलमे खल्क यानी आलमें मलकूस से है, जिसको हिन्दी में सूक्ष्म कहते हैं और पॉच आीलमें अमर यानी आलमें जबरूत से है जिनको हिन्दी में कारण कहते हैं। बाज ने आलमें खल्क के लतीफों की जगह बतलाई है वाज ने आलमें अमर की। दरअसल आलमें खल्फ के लतीफा आलमें अमर के लतीफों के अक्स हैं। उनका अहवाल इस तरह पर हैः—

कल्वः— इस लतफे की जगह बाऍ पहलू में किसी ने दो अंगुल व किसी ने चार अंगुल जेरे पस्ता मानी है। इसका रंग जर्द है और इसकी विलायत हजरत आदम के जेरे कदम है जिसको यह नूर हासिल हुआ। उनको आदमी अल मुर्रब कहते हैं। इस लतीफे के जारी होने से सिर से पैर तक बहरे अल्लाह में गर्क हो जाता है।

रूहः— इसकी जगह दॉये पहलू में पिस्तॉ के नीचे दो अंगुल पर रूह मानी गयी है। इसका नूर सुर्ख है। इसके जारी होने पर गफलत दूर हो जाती है और दिल पर गर्मी और चश्म तर रहती है और इसकी विलायत हजरत इब्राहिम के जेरे कदम हे जिनको यह हासिल हुआ उसका इब्राहीमी मुशर्रब कहते हैं। यह विलायत का दूसरा दर्जा है।

सिर्रः— इसकी जगह सीने में बॉये पिस्तान के ऊपर है। यह रूह से ज्यादा लतीफ और उसका नूर सफेद है। इसके जीर होने से इन्सान को अपने हर एक ऊजू (हिस्से) से आगाही हो आती है और इस्म के साथ मुसम्मी का शऊद हो जाता है यानी भेद खुल जाता है। इसकी विलायत हजरत मूसा के जेरे कदम है। जिसको यह हासिल हुआ उसको मुसम्मी उल मुशर्रब कहते हैं।

खफीः— इसका मुकाम दाईं जानिब पिस्तां के ऊपर है। यह सिर्र से ज्यादा लतीफ है। इसका नूर स्याह है। जब यह जारी हो जाी है तो सिर से पैर तक वहरे खुदा में मुस्तगरिक हो जाता है। लेकिन अपने वजूद की खबर रहती है और एक—एक बाल मिस्ल ऑख के हो जाता

है। चश्म गरद्द मुए करिफां। इसकी विलायत जेरे कदम हजरत ईसा है जिसको यह नूर हासिल हो उसको ईसवी उल मुशर्रब कहते हैं।

अखफीः– इसकी जगह सीने के दरम्यान है। इसका नूर सब्ज है। जब यह जारी हो जाता है तो खुदा का जलाल और नूर नजर आता है जिसमें हस्ती फना हो जाती है। इसके फनाफिल जकूर कहते हैं। इसकी विलायत जेरे कदम हजरत मुहम्मद साहब है, जिनको यह हासिल हुआ उनको मुहम्मदी उल मुशर्रब कहते हैं और यह विलायत पंचगाना है और इसके बाद नूर बेरंगी है।

इस विद्या का दारमदार सिर्फ तीन चीजों पर हैः–

1. हृदय को खूब साफ बनाना। इसको मुसलमानसंत तसफिया कल्ब कहते हैं। यह सब शिष्य का काम है। सिर्फ सत्संग मदद कर सकता है। इसमें गुरु ज्यादा मदद नहीं कर सकता।
2. उस साफ हृदय को प्रभु के प्रेम में खूब भर लें। इसमें गुरु माफी मदद कर सकता है।
3. उसी प्रेम से भरे हृदय को प्रभु को सुपुर्द कर दो ताकि प्रेम का अहंकार भी खत्म हो जाए।

   1.दिल –हृदय की सफाई, 2. दिल–हृदय का प्रेम से गदगद होना, 3. हृदय का अधीन होना–ये सिखाने वाले के लिए है।

4. सीखने वाले दूसरे अलफाजों में शिष्य की गुरु में पूर्ण रूप से फनाइयत। पहले यह स्थूल रूप से हाती है, फिर असली फनाइयत होती है। इसकी पहचान जबानी बतलायी जा सकती है।
5. इसके बाद शिष्य की दूसरी फनाइयत अपने सिलसिले के बुजुर्गों में होती है। बुजुर्गों की फनाइयत ईश्वर में होती है।
6. तीसरी फनाइयत शिष्य की बजरिया अपने गुरु पीराने उज्जाम परमात्मा में हो अर्थात शिष्य की फनाइयत पहले गुरु में फिर पीराने उज्जाम में और फिर ईश्वर में हो जावे। इसके लिए दिल का साफ होना जरूरी है और दिल साफ ही न हो बल्कि प्रेम से गदगद होकर अन्त में आधीन हो जावे।

दिल की सफाई के लिए अभ्यास की सख्त जरूरत है। इसके साथ–साथ गुरु की सोहबत की जरूरत है ताकि वह अपनी दया दृष्टि से अपने पीराने उज्जाम के वसीला से प्रभु के चरणों में प्रेम का सम्बन्ध करके उसे शिष्य पर डालता रहे। अपना अभ्यास प्रभु के प्रेम की बौछार अपने गुरुदेव के वसीला से दोनों चीजें मिल मिलाकर उसके हृदय को साफ कर देती हैं और प्रेम भरती चली जाती है।

कुछ अर्सा साफ दिल प्रेम से गद–गद दिल प्रभु का ख्याल करके और उसका प्रेम अपने ऊपर इतना देखकर अति नम्र और आधीनता ले जाता है और यही उसकी दया है।

दिल की सफाई के लिए

दिल की सफाई के लिए दया–दान–धर्म–सच्चर्ा पूर्ण रूप से मदद करती है, बल्कि अगर यह कहा जावे कि ये चारों इस काम के लिए थम्ब (पिलर्स) का काम देते हैं। सुमिरन, ध्यान, भजन की तरफ तवज्जो करने वाले प्राणी जो उसके मुतलाशी (जिज्ञासु) हैं बहुत मेहनत करते हैं और हर तरह की तपस्या करते हैं। मगर उनको कोई फायदा महसूस नहीं होता है और मजबूरन या तो हर जगह भटकते फिरते हैं या दरदरगुरु की तलाश करते हैं कि कोई इस राह का बतलाने वाला मिल जावे और रास्ते की कठिनाइयॉ सरल हो और फायदा महसूस करे। हर तरह बेचारों को धोखा देने वाले मिलते हैं और परेशान होकर या तो रास्ते का चलना छोड़ देते हैं या घबरा कर और यह समझकर कि यह इल्म इस जिन्दगी में हासिल होना बहुत मुश्किल है, अतः मायूस और ना उम्मीद हो जाते हैं। लेकिन कुछ हकीकत पसन्द ऐसे भी मिलेंगे जो बराबर तलाश में लगे ही रहते हैं और स्वाति के जल की तलाश को कायम रखते हैं। परमात्मा इनकी हिम्मत को देखकर किसी न किसी दयालू सन्त को इनकी इमदाद के लिए भेज ही देते हैं और इनको रास्ते की सहूलियत भी पैदा कर देते हैं।

जहॉ Materialism में दुनिया ने तरक्की की, इस तरीके से Spiritualism में भी समय–समय पर प्राणियों के चेताने के लिए और उनको आईंदा तरक्की का दरवाजा खोलने के लिए परमात्मा के जिज्ञासुओं के लिए हर तरीके की सहूलियतें सोची और आपस में सन्तों ने उसका एक दूसरे से वार्तालाप किया और जितनी आगे सहूलियतें हो सकती थीं, प्राणियों के फायदे के लिए उनकी तन्दरुस्ती, माली हालत और उनकी कठिनाइयों का ध्यान देते हुए बराबर पैदा करते रहे हैं।

जिज्ञासु यह याद रखे कि पाखण्डी गुरु हमेशा हरी से दुनिया मॉगता है। वह गुरु का स्वांग किसी दुनियावी गरज के लिए रचता है और सच्चा गुरु हमेशा कुल मालिक के प्रेम में लीन और दुनिया से बेनियाज रहता है और गुरु के फराइज महज कुल मालिक की सेवा के तौर पर अदा करता है, इसलिए अगर जिज्ञासु अपने मकसद यानि तलाशें हक पर जमा रहेगा तो उसकी सोहबत चन्द ही दिनों में पाखण्डी गुरु के लिए बवालजान बन जावेगी। बर खिलाफ इसके स़च्चा गुरु उसके प्रेम विहंग की ज्यादा से ज्यादा कद्र करेगा। जिज्ञासु को इतना ख्याल और रखना चाहिए कि सतगुरु की तलाश के सिलसिले में जल्दबाजी से काम न ले, क्योंकि बाज औकात

साधु सन्त अपनी चाल ढाल में एक आधी बात ऐसी रख लेते हैं जिसे देखकर दुनियादार घबरा जायें और उनकी संगति से दूर रहें। जिज्ञासु के लिए मुनासिब होगा कि जहॉ तक और जहॉ कहीं पर सतगुरु की मौजूदगी की इतलाह मिले, पूर्ण श्रद्धा के साथ और दिल का प्याला दुनियावी ख्वाहिशात की आलाएस से पाक करके हाजिर हो और एक–दो सप्ताह उनकी सोहबत में रहकर देखे कि उसके प्याले में क्या चीज दाखिल होती है। अगर उसकी सोहबत के असर का नतीजा दुनिया से नफरत और कुल मालिक के दर्शन की तड़प में तरक्की हो तो यकीन लावें क किसी साहिबे कमाल (पूर्ण पुरुष) से मुलाकात हुई हे। अगर नतीजा बरक्स हो तो दामन झाड़कर अपने घर वापस चला जावे। शुरू में गुरु की पहचान इतनी काफी है।

हालांकि सत्गरु की पहचान बहुत मुश्किल से होती है। जब तक कि खुद अभ्यास काफी न करता रहे। सतगुरु के चरणों की सच्ची प्रीति पैदा होकर हर किस्म के दुनियावी बन्धनों से छुटकारा और कुल मालिक के निज स्वरूप से ज्यादा से ज्यादा नजदीकी हासिल होती जावेगी और एक दिन ऐसा आवेगा कि उसे अपना स्वरूप सतगुरु का स्वरूप और कुल मालिक का स्वरूप एक नजर आवेगा और यह भी दिन होगा जब उसे सत्गुरु की असली व पूरी पहचान आवेगी। उस वक्त इसके अन्तर के अन्दर से आवाज निकलेगी 'धन्य सत्गुरु धन्य उनकी संगत जिस प्रताप से पाई है मैं यह गत' गुरु की सोहबत में रूहानी कुब्बतें बेदार हो जाती हैं और इन कुब्बतों के बेदार और जाग्रत होने पर जो ज्ञान या इल्म होता है,उसे अनुभवी ज्ञान कहते हैं।

सुमिरनः– ध्यान की युक्तियॉ जो हमारे यहॉ राइज (फैली हुई) हैं, कोई नयी बात नहीं है। पिछले जमाने से उनका रिवाज चला आ रहा है। पतंजलि योग सूत्रों में भी उनका बयान है, लेकिन इन युक्तियों की कमाई बिना सच्चे अनुराग व सच्चे वैराग्य के असम्भव है।

जप के कई तरीके हैंः–

1. **जबान का जापः–** समिरन का सबसे अदना तरीका है।
2. **दिल का जापः–** जबान के जाप से अच्छा है लेकिन उससे भी महज सफाई कल्ब हासिल होती है। रूहानी कुव्वत पर कोई असर नहीं पड़ता है और चूँकि परमार्थी की असल गरज अपनी रूहानी कुब्बत का बेदार करना है इसलिए उस दिली मुद्दा के हासिल करने के लिए यह तरीका भी ज्यादा फायदेमन्द नहीं है। सुमिरन का असली तरीका एक राज है जो सीना–ब–सीना चलता है।

❋ ❋

ईश्वर प्राप्ति का यकीनी जरिया

महात्मा रामचन्द्र जी महाराज फतेहगढ़ निवासी जो बहुत बड़े सन्त हुए हैं, उकने नजदीक भगवान् को प्राप्ति का निश्चित मार्ग यह हैः–

1. जिक्र खफी यानि दिल का जाप सिर्फ किया करें।
2. और नाजिन्स और गैर आदमी, गैर सुहबत के नक्शे से दिल को साफ रखें।
3. और परमात्मा के सिवाय किसी की तरफ तवज्जह न करें।
4. और इकसुई और एकाग्रता के साथ दिल हाजिर रखने की तरफ पक्का इरादा कर लें।
5. और सन्त और मालिक की तरफ उनसियत व लगाव हासिल करना।
6. और अपने आपको मेटकर उसी में महब और लय हो जाना।
7. और इसी काम में अपने आपको मिटा देना।

सबसे ज्यादा नजदीक रास्ता असल पद तक पहॅुचने का यकीनी जरिया है।

घट विद्या

ब्रह्म विद्या घट विद्या है जब तक किसी का घट नहीं खुलेगा, ब्रह्म विद्या नहीं आयेगी। कुछ लोगों ने पिछली किताबें देखकर खुद इसको खोलने की कोशिश की, कुछ ने किसी गाइड की सहायता ली है। इसमें कुछ ऐसे भी संत आते हैं जो कुदरत की तरफ से भेजे गये थे। उन्होंने इस विद्या का बहुत ही प्रचार प्रसार किया। घट विद्या के सब भेदें को जन साधारण में जाहिर किया। यह विद्या हिन्दुस्तान में सबसे ज्यादा और पुरानी मालूम होती है क्योंकि ऋगवेद, उपनिषद, गीता में इसका जिक्र है और कबीर साहब ने कुल 32 चौपाइयों में इसका पूरा भेद खोल दिया है। वैसे यह विद्या दुनिया के सभी देशों में कमोवेशी मिलेगी। उसके भक्त सब जगह हैं, कोई देश उनसे खाली नहीं है।

घट विद्या का मार्ग खोलने के लिए गुरुनानक देव ने शब्द पर जोर दिया है। मुसलमान संतों ने तपस्या जिक्र (जप) और मराकबा (ध्यान) पर ज्यादा जोर दिया है। 'ख्वाजगान खानदान नक्शबन्दिया मुजद्दिया मजहरिया' इन्होंने राबता (गुरु से प्रेम) जिक्र (जप) मराकबा (ध्यान) अदब ताजीम, प्रेम, सच्चाई, हलाज की कमाई पर जोर बहुत दिया है। ख्वाजगान खानदान चिश्तिया ने तपस्या और हलाज की कमाई पर ज्यादा जोर दिया है और इनके शगल (कर्म) जरा मुश्किल (कड़े) हैं। इसाईयों ने शब्द पर जोर दिया है। रास्ता घर का सिर्फ एक है दो हो ही नहीं सकते। और यह सीधी सड़क गुदा चक्र से ध्रुपद (सत्यलोक) तक है।

दुनिया में जितने भी संत हुए हैं, सबने एक ही अनुभव लिखा है। इसमें हर चक्र का भेद लफ्जों में अलग–अलग है, लेकिन है एक ही। सबसे अच्छा इस रास्ते में चलने वालों के लिए यह है कि जो पैदाइसी संत समय–समय पर आते हैं,उनसे मदद लेवें। इस रास्ते पर चलना ज्यादा मुनासिब है। दूसरे उन लोगों से सोहबत उठाना या सत्संग करना जो इन पैदाइसी संतों से अपनी तकमील (पूर्णता) कर चुके हैं। मेरे ख्याल से रावता सिर्फ उन लोगों का वाजिब है जो सतलोक तक पहुँच चुके हैं और उनके गुरुदेव ने तकमील (पूर्णता) कर चुके हैं। मेरे ख्याल से रावता सिर्फ उन लोगों का वाजिब है जो सतलोक तक पहुँच चुके हैं और उनके गुरुदेव ने तकमील (पूर्णता) की इजाजत लिखित रूप से दे दी है। इस रास्ते में ज्यादा अच्छा यह है कि खाली किताबें देखकर कोई

शगल (कर्म) न करें। इससे नुकसान पहुॅचने का डर रहता है। संतों की वाणी को खासतौर से पढ़ें।

आत्मा की धार ऊपर के जिन मण्डलों से आई, उनमें छः मंडल बड़े नूरानी (प्रकाशमान) हैं, उसको कारण या दयाल देश भी कहते हैं। दूसरे छः चक्र उससे कम नूरानी हैं नीचे के छः चक्र जो स्थूल के हैं, उनमें आत्मा बिल्कुल दब गयी है। आमतौर से नीचे से ही ऊपर को आत्मा की धार पहुॅचाने की कोशिश की है लेकिन आत्मा नीचे के चक्रों से ही ऊपर को जायेगी। इसी का भेद हर घट मार्ग की किताब में मिलेगा। जो हालतें हर चक्रों पर गुजरी हैं, वह संतों ने लिखने की कोशिश की हें। बहुत सी चीजें हैं तो अभ्यासी के लिए बहुत लाभदायक साबित हुई हैं। इसमें सबसे ज्यादा संतों के लिए वे किसी मजहब और जाति के हों, अभ्यासी अपनी शुभकामनाऍ भेजते रहें।

सातव सब मोहिमय जग देखें, मोते संत अधिकतर लेखे।।

1. ओउ्म् शान्ति का या दुरुद शरीफ '' अल्ला हुमा सल्लेअला सैयदना मुहम्मदिन, मादनिल जूदे वल करम व आलेही वसल्लम'' का जाप निश्चित रूप से और बिना नागा करते रहें जिसको देख है उनका रूप सामने कर लें इसमें इससे भी अधिक अच्छा यह है कि अपने गुरु के जरिये गुजरे हुए संतों को अपनी शुभ कामनाऍ ओउम् शान्ति या दरूद शरीफ के जाप द्वारा भेजते रहें।
2. निहायत हलाल की कमाई खाना चाहिए। दुनिया में कोई भी ऐसा सन्त नहीं है जिसने हलाल की कमाई पर जोर न दिया हो। खासतौर से खाने में सिवाय हलाल की कमाई के और खाना दूसरा नहीं खाना चाहिए।
3. बड़ी नम्रता से दूसरों से पेश आना चाहिए।
4. बड़ी खुश इखलाकी (आदरपूर्वक) से पेश आना चाहिए।
5. उच्चतम चरित्र जन साधारण में पेश करें।
6. प्रेम
7. सच्चाई
8. जहॉ तक हो सतोगुणी भोजन इस रास्ते में ज्यादा लाभदायक है। परा विद्या को हासिल करने का सबसे तरल तरीका है।

❀❀❀

घट चक्र भेद

परमात्मा जिस प्राणी को अपनी मोहब्बत देता है, उसको किसी न किसी तरह अपनी तरफ खींच लेता है। प्रभु जब ऐसी दया करें और कोई उसके दास सन्त रूप में अकस्मात ही मिल जावे तो खुशकिस्मती है। वरन् जो कुरेद प्रभु की तरफ से होती है, उसको खत्म न होने दे और खुद उसके भक्तों की तलाश करता रहे। इसकी बड़ी सीधी तरकीब यह है कि ऐसे सत्संग की तलाश करें जहॉ ईश्वर चर्चा होती हो। ज्यादातर तो वाचक ज्ञानी मिलते हैं। फिर भी उन्हें खूब सुने। यदि इत्ताक से कोई ऐसे सन्त बुजुर्ग मिल जावें जो घट से वाकिफ हों और जिन्हें चक्र विद्या का ज्ञान हो तो कुछ दिन उनका सत्संग उठावें और अगर अपना घट खुलता दिखे, प्रेम उभरे,सदाचार कुछ ठीक हो निकले और सही और गलत में विवके हो निकले यानि तमीज आने लगे तो ऐसे सन्त को अपना मार्गदर्शक बना लें। घट विद्या तब तक नहीं आती जब तक घट चक्र नहीं खुलते। जो शख्स घट विद्या से वाकिफ हैं, वही दूसरों के घट के चक खोल सकता है। वरन् महज वाचक ज्ञानी ही बना रहता है। बिना चक विद्या के ब्रह्मविद्या नहीं आ सकती। बाकी चीजें शायद मिल भी जायें।

पिण्ड, ब्रह्माण्ड और दयाल देश यह तीन बड़े मण्डल हैं। हर एक में छः चक्र हैं जो अपने से ऊपर के मण्डल के चक्रों के प्रतिबिम्ब हैं। इस तरह कुल अठारह दर्जे हैं, लेकिन दयाल देश के तीन दर्जों से ऊपर का हाल वर्णन में नहीं आ सकता।

सन्तमत के ख्याल से पराविद्या को इस तरह से वर्णन किया गया है:–

सन्तमत का ऐसा उपदेश है– सुरत यानि रूह का असली मुकाम अनामी स्थान है, जिसे अकह लोक भी कहते हैं। इस दरजा तक जिसको रसाई होती है,उसको परम्सन्त कहते हैं। इस मुकाम से एक शब्द रूपी धार उठकर नीचे उतरी और दो मुकाम अगम और अलख से होकर सतलोक में आई। यह स्थान महा प्रकाशमान और निर्मल यानि चेतन ही चेतन है। इस मुकाम तक पहुॅचे हुए को संत व सत्पुरूष कहते हैं और इस मुकाम को उर्दू में हूत भी कहते हैं। इन मजकूरा वाला चारों मुकामों को दयाल देश कहते हैं।

सत्लोक से नीचे भॅवरगुफा, फिर महासुन्न फिर सुन्न यानी दसवां द्वार है। इस जगह रूह ब्रह्माण्ड और पिण्ड में फैली है। इस मुकाम को

आत्मपद, पारब्रह्म पद तथा उर्दू में हाहूत कहते हैं। इस जगह तक सुरत पॉच तत्व, तीन गुण, कारण और सूक्ष्म और स्थूल शरीर से अलहदा है, पुरुष और प्रकृति का प्राकट्य जहूर इस जगह से हुआ है। इस मुकाम पर पहुॅचे हुए को पूरा साध कहते हैं।

सुन्न से नीचे त्रिकुटी है। इसी को गगन 'ब्रह्म' प्रणव–ओम–महाआकाश, अर्शेअजीम और आलमे लाहूत कहते हैं। इस मुकाम के मालिक को ब्रह्म–ब्रह्मान्दी मन और खुदाए अजीम भी कहते हैं। यहॉ से महासूक्ष्म, तीन गुण, पॉच तत्व और वेद आदिक और आसमानी किताब और कुल रचना का सूक्ष्म मसाला और निर्मल माया प्रकट हुई।ओम् शब्द को ही महत्त कहते हैं। इसके पार जाने से तीन लोग की रचना के घेरे से न्यारा होता है। इसके नीचे सहस्त्र दल कॅवल है। इसको ज्योति निरंजन, शिव शक्ति निजमन वगैरह भी कहते हैं और संतमत में यहॉ से साधना शुरू करायी जाती है। इस स्थान से सूक्ष्म तत्व यानी शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध और इसके पीछे स्थूल तत्व यानी आकाश, वायु,जल, पृथ्वी और सूक्ष्म इन्द्रियॉ प्राण और प्रकृतियॉ प्रकट हई हैं। इसी स्थान का प्रतिबिम्ब यानी अक्स या साया पहले नुकताए सुवेदा यानी कि तीसरे तिल में जो ऑखों के पीछे मध्य में पड़ता है, और फिर दोनों ऑखों में इसकी धार आकर ठहरती है। और सहस्त्र दल कंवल से चिदाकाश यानी ब्यापक चेतन जिसको ज्ञानी ब्रह्म कहते हैं। तमाम पिण्ड यानी देह में और कुल रचना में जो इस मुकाम से नीचे ही फैला हुआ है, यहॉ तक दरजात उलवी यानी आसमानी है। इसके नीचे छः स्थान जिनको घटचक्र कहते हैं, पिण्ड में अनके अक्स हैं और उनको मुकामात सिफली कहते हैं और पहला चक्र दोनों ऑखों के पीछे है जहॉ सुरत यानी रूह का ठहराव है। दूसरा चक्र मुकाम कंठ यानी गले में है और इस जगह सुपने की रचना जीवात्मा लिंग शरीर की मदद से पैदा करता है। देह के प्राण का स्थान यही है।

तीसरा चक्र हृदय में है और दिल यानी पिण्डी मन का यही स्थान है। संकल्प विकल्प इसी जगह से पैदा होते हैं। खुशी रंज (आशा–निराशा) खौफ–बेखौफ, सुख–दुःख बगैरह का असर इसी स्थान पर होता है। चौथा चक्र नाभि कॅवल है और स्थूल पवन का यही भण्डार है। पॉचवा इन्द्रिय चक्र है। इस स्थान से पैदायश स्थूल शरीर की है। छठा चक्र गुदा है। यह चक्र नाफ की तरफ से प्राणों को खींच कर नीचे के जिस्म यानी टॉगों और पाओं को ताकत देता है।

पिण्ड की हद टॉगों तक है, क्योंकि सिफली (नीचे या हल्के व छोटे) चक्र ऑखों के नीचे तक खत्म होते हैं। ऑखों के ऊपर सहस्त्रदल कॅवल के मैदान से ब्रह्माण्ड कहलाता है और महासुन्न के मैदान यानी महा सुन्न के परे दयाल देश है। चक्रों की तफसील इस तरह से है–

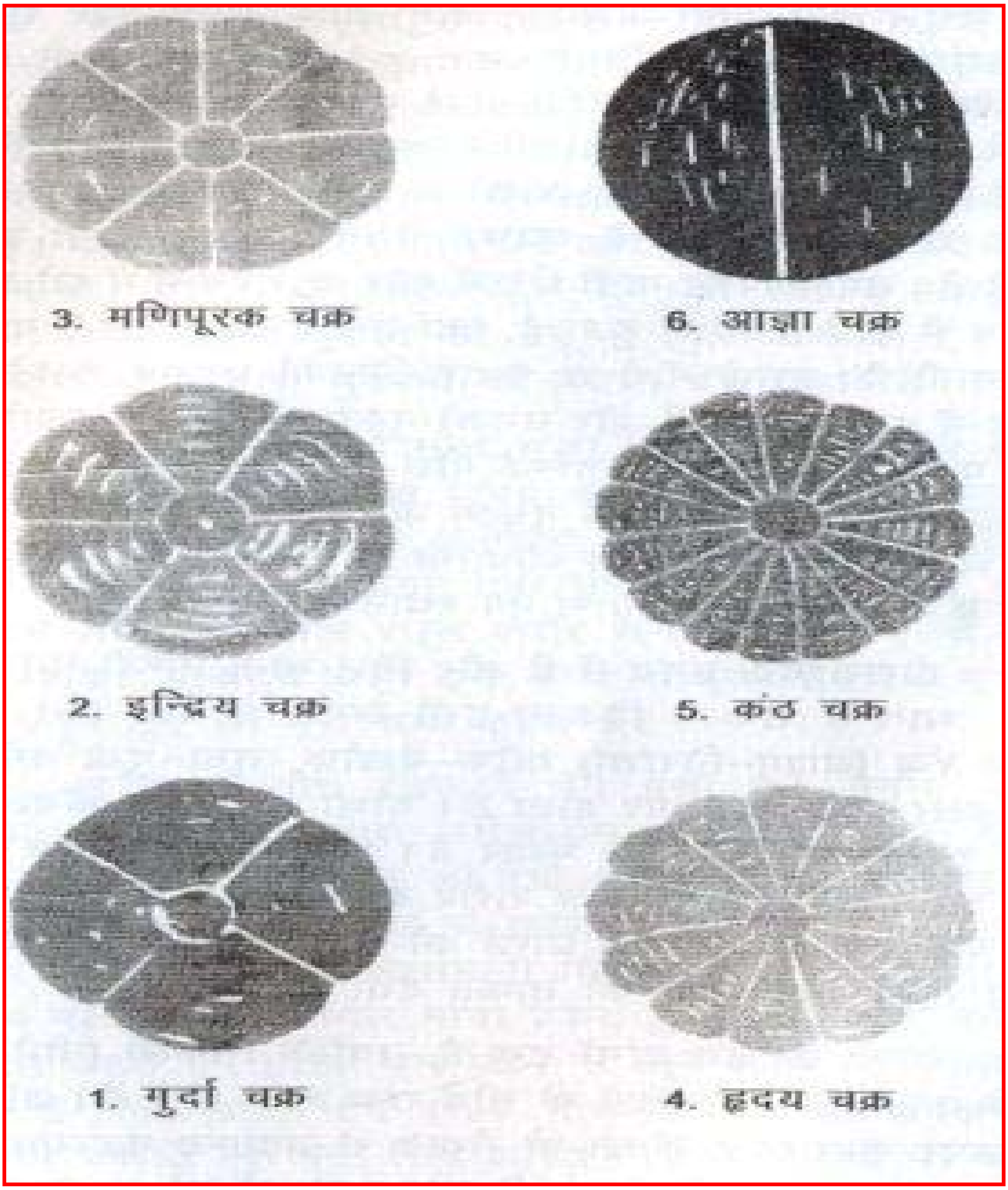

स्थूल चक्रों का वर्णन

चक्रों की तफसील

1. गुदा चक्र या मूलाधार चार दल का कंवल तीनों मुकाम–गुदा इन्द्रिय और नाभि आलमें नासूत में दाखिल हैं। यहाॅ गणेशजी का वासा है। चूॅकि अगले जमाने में योग अभ्यास इसी जगह से शुरु कराया जाता था, इसलिए योगियों की देखा–देखी अक्सर गृहस्थी लोग हर एक काम को शुरु करने के वक्त गणेश जी की पूजा करते हैं। इसका रंग लाल सुर्ख है। **पिण्ड**

2. इन्द्रिय चक्र या स्वाधिष्ठान, छः दल का कंवल आलमें नासूत ब्रह्य यानी कुब्बते पैदाइस का वासा है। इसका रंग सफेदी मिला काला है। **पिण्ड**

3. नाभि चक्र या मणिपूरक दस दल का कंवल आलमें नासूत विष्णु यानि कुबते परवरिश का वासा है। इसका रंग हल्का लाल है। **पिण्ड**

4. हृदय चक्र या अनहत बारह दल का कंवल यह तीन मुकाम हृदय चक्र, कण्ड कंवल और शिव नंत्र आलम मलकूत में दाखिल है। महादेव यानि कुब्बल फना का वासा है। इसका रंग नीला है। **पिण्ड**

5. कण्ठ चक्र या इशुद्ध सोलह दल का कंवल हृदय कंवल, कंठ कंवल और शिव नेत्र आलमें मलकूत में दाखिल है। दुर्गा यानि कुब्बते इच्छा (ख्वाहिश) का वासा है। इसका रंग गहरा नीला है। **पिण्ड**

6. तीसरा तिल या नेत्र जिसको शिवनेत्र, शामसेत, आज्ञाचक्र, नुकताए सवैदा वगैरा भी कहते हैं। दो दल का कंवल तदैव सूरत यानि परमात्मा का वासा शुरू में इस जगह सुरत को समेटना चाहिए। इस मुकाम के साथ अन्तःकरण की डोर लगी हुई है और अन्तःकरण के साथ दसों इन्द्रियाॅ वगैरह की डोर लगी हुई है। यहाॅ मुकाम सिफली खत्म होते हैं। इसका रंग काला है। **पिण्ड**

7. सहस्त्रदल कंवल हजार दल का कंवल जबरूत ज्योति निरंजन का वासा है। यहाॅ दो आवाजें आसमानी निकली है यानि शब्द प्रकट होता है। इनको पकड़कर ऊपर को चढ़ती है। **ब्रह्माण्ड**

8. त्रिकुटी तीन दल का कंवल लाहूत का वासा है। यह त्रिकुटी संतों की हे। जोगेश्वरियों की नहीं है। इसको हंसए मुखी कहते हैं। **ब्रह्माण्ड**

9. सुन्न यानी दसवां द्वार एक दल का कंवल हाहूत पारब्रह्म का वासा है यहाॅ स्थान उलवी खत्म हुए। **ब्रह्माण्ड**

10. महासुन्न मैदान हाहूत चार शब्द और पॉचवा मुकाम गुप्त है। **दयालदेश की हद।**
11. भॅवर गुफा मैदान हुतूलहूत सोहं पुरुष का वासा है। यह सोहं स्वासों का नहीं है। यह दो स्थान यानि महासुन्न और भॅवर गुफा दयाल देश की हद में है। दयाल देश की हद।
12. सत्लोक मैदान हूत सत् पुरुष का वासा है। इसके ऊपर तीन मुकाम और हैं मगर संतों ने उनको प्रकट करके नहीं बयान किया। दयाल देश।
13. अलख पुरुष यहॉ आत्मा अलग पुरुष का दर्शन पाती है। यहॉ एक एक रोम में अरबों सूर्य का उजाला है।
14. अगम पुरुष यहॉ करोड़ों शंख की काया अगम पुरुष की है। वहॉ अद्भुद आनन्द ही आनन्द है।
15. अनामी अकहा यह स्थान परम् संत का है। यह फकीरों का निज स्थान है।

वृत्तियों और धारा को दिल कहते हैं। यानि सिफली मुकामात के दलों को वृत्तियॉ और उल्वी मुकामात के दलों को धारें कहते हैं। जिस्म यानि शरीर तीन किस्म का हैः–

1. स्थूल, 2. सूक्ष्म, 3. कारण। स्थूल जो दिखाई देता है। यह सुरत या जीवात्मा का जाहिरी लिवास और औजार है। इसका सम्बन्ध सिर्फ जाग्रत अवस्था में है। इसके मुतल्लिक दुःख सुख वगैरह सिर्फ जाग्रत में प्रतीत होते हैं। इसी तरह सूक्ष्म शरीर का ताल्लुक सिर्फ स्वप्न अवस्था से है।

गोया यह तीन गिलाफ रूह के ऊपर चढ़े हुए हैं या यूॅ समझना चाहिए कि रूह एक चेतन शक्ति बेशुमार धारों वाली है। वह धारे पहले खालिस नूर (प्रकाश) थी दरजा व दरजा मिलौनी होती है। वैसे–वैसे आकार बनना शुरू हुआ और धारों दरजा व दरजा स्थूल होती चली गयी। जानना चाहिए कि सुरत यानि रूह के बराबर सूक्ष्म या उसकी सी ताकत व फजीलत (बड़ी) वाली कोई चीज नहीं । ताहम सिर्फ सूझ में आने के वास्ते पानी का दृष्टांत दिया जाता है। पर दृष्टांत एक अलग लगना चाहिए। पानी पहले निहायत ही सूक्ष्म बल्कि बिना रू॰ का था। फिर गैस रूप हुआ, फिर बादल बुखारात बना फिर बारिश के जरिए पृथ्वी पर आकर स्थूल रूप हो गया। बाज जगह सर्दी के सबब बर्फ

बनकर बिल्कुल बेहिस बहरकत व बेजान सा हो गया और अमूमन बर्फ के बादल तक मुख्तलिफ शक्लें बदलकर मुख्तलिफ हालतें हासिल करके कभी रूप वाला कभी अरूप (बिना रूप) हो जाता है।

लेकिन जब गैस या उससे ज्यादा लतीफ (हल्का) हो जाता है तो निहायत ही ताकतवर होकर ऊँचे देश में जा मिलता है। इसी तरह रूह का कोई रूप नहीं मगर मिलौनी होते होते उन मलों का रूप दिखाई देता है और जिस कद्र ज्यादा मिलौनी होती जाती है, रूह की ताकन उन मिलौनियों में जज्ब या पोशीदा होती जाती है।

जिस वक्त रूह इन मलों के खोलों से प्रीति छोड़कर शब्द में प्रेम पूर्वक जुड़ेगी, तो उसमें मिस्ल उस अग्नि के जिसके ऊपर से राख हटा दी जाती है, ऐसी ताकत पैदा होगी जिसके जरिए चेतन व जड़ की गॉठ खुलकर और ब्रह्माण्ड फोड़कर सतलोक अनामी स्थान में जा पहुॅचेगी और उीस वक्त आवागमन से निजात हो जायेगी।मन, इन्द्रिय व देह जुम्ला सांसारिक पदार्थ व स्वर्ग वगैरा जड़ है और सुरत यानि रूह चैतन्य है। मुकाम त्रिकुटी में इनकी मिलौनी शुरू हुई है। इसी मुकाम तक माया का असर है और इसी जगह से जड़ और चेतन की गॉठ शुरू हुई और बॅधी है। इस जगह सुरत को जिन मुकामात में होकर नीचे उतरी है, उन्हीं मुकामात से दरजा ब दरजा अभ्यास से ऊपर की तरफ खींचकर ले जाने से त्रिकुटी में जड़ चेतन की गॉठ खुल जावेगी। यानी जड़ पदार्थ इस जगह रह जायेंगे आगे नहीं आ सकते हैं।

अगरचे ब्रह्माण्ड के मुकामात निहायत बड़े हैं और दूरदराज फासले पर वाके हैं। ताहम मिस्ल तारवरकी के उनकी डोरियॉ हमारे अन्तर में लगी हुई हैं। जब सुरत शब्द योग अभ्यास करने से रूह हमारे जिस्म से सिमटकर ऊपर के मुकामात जिस्म में चढ़ जावेगी। जब और जिस कदर देर तक चढ़ेगी, उन मुकामात से तार लगा हुआ है और जो धारें आती–जाती हैं, वह बतौर दूरबीन के हैं जिनके जरिए हम सितारों को देख सकते हैं और देखते हैं।

आगाज (प्रारम्भ) भक्ति का यह लक्ष्य है कि मालिक के चरणों में प्रेम व प्रतीति होना भक्ति उपासना है और यही उसी वक्त सच्चे दिल से हो सकती है कि जब सन्त और मालिक का अन्तर में दर्शनहो जाता है और चूॅकि सुरत शब्द अभ्यासी को कभी–कभी ध्यान और भजन और हालतें ख्वाब में सन्त सतगुरु व शब्द स्वरूप मालिक का दर्शन अन्तर में होने लगता है। इस इसी वक्त से भक्ति यानि उपासना शुरु हो जाती है और रोज ब रोज प्रेम बढ़ता जाता है। त्रिकुटी पर पहुॅचने पर प्रेम और

भक्ति निर्मल हो जाती है और कर्म की कुदुरत (मैला) नहीं रहती, पर त्रिकुटी के पास चलने से सच्ची और निर्मल भक्ति शुरू हो जाती है और अगम लोक के पहुॅंचने पर भक्ति खत्म हो जाती है।

आगे अनामी पद में ज्ञान प्राप्त होता है और जानना चाहिए कि ज्ञान के लक्षण होने से यह मुराद है कि सतलोक और अगम लोक के परे पहॅंचकर कुल मालिक के दर्शन करना और महा आनन्द को प्राप्त होकर पूर्ण शब्द एवं प्रेम स्वरूप हो जाना। इसको ज्ञान कहते हैं। इसी का नाम अभेद भक्ति और सच्ची मोक्ष है।

सन्तमत में पिछले वक्तों के कर्म व देवी देवताओं व मूर्तियों की उपासना को सिर्फ इल्मी ज्ञान नहीं माना गया, क्योंकि इससे कुछ हासिल नहीं हो सकता। मुफ्त वक्त का जाया करना और बेफायदा सिर्फ तनम न धान का खोना हेता है और हर एक शख्स की ताकत भी नहीं है कि पिछले वक्त के कर्म व उपासना के कवायद (नियम) वमूजिव (अनुसार) इस समय में कार्यवाही कर सके। इसी वजह से वह कर्म विधिपूर्वक नहीं बनते और विकार पैदा हो जाता है।

✵

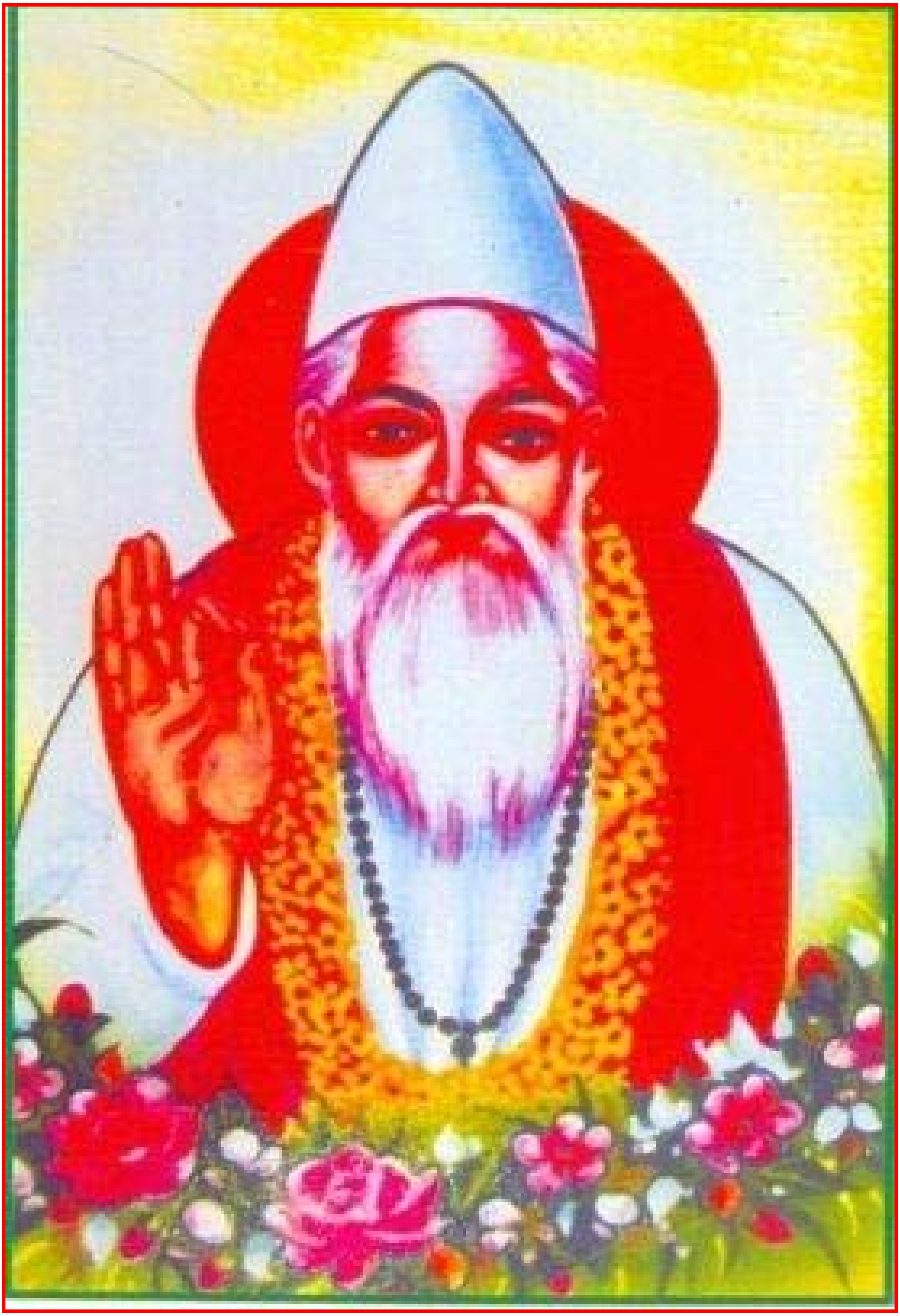

शब्द कबीर साहब

कबिरा खड़ा बाजार में मॉगे सबकी खैर।
ना काहू से दोस्ती न काहू से बैर।।

—1—

कर नैनों दीदार महल में प्यारा है।।टेक।।
काम कोध मद लोभ बिसारों,
सील संतोष क्षमा चित धारो।
मद्य मांस मिथ्या तज डारो,
हो ज्ञान घोड़े असवार भरम से न्यारा है।। कर नैनो।1।

कबीर साहब ने इन पंक्तियों में योगियों के अभ्यास का तरीका (विधि) बताई है।

कबीर साहब कहते हैं कि मनुष्य के शरीर ही में परमात्मा का वास है। यदि उस परम् पिता के दर्शन करने हैं तो उसी शरीर रूपी घट महल में वह प्यारा परमात्मा का वास है, परन्तु उस परमात्मा के दर्शन या उसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य को काम, इसका अर्थ भोग से है (अर्थात किसी परनारी पर कुदृष्टि डालना) काम मनुष्य को नीचे की तरफ अर्थात पतन की ओर ले जाता है और कोध और लोभ उसको फैलाते हैं अर्थात पतन में सहायक होते हैं। अहंकार ऊपर मंडल में जाने से रोकता है इसलिए कबीर दास जी कहते हैं इन सब काम, कोध, लोभ, अहंकार को त्याग दो। इन अमानवीय दुर्गुणों को त्याग कर शील अच्छा आचरण, संतोष जो ईश्वर ने दिया है, उसमें राजी रहना यानी राजा–ब–रजा रहना, क्षमा आदि को धारण करो। शराब, मांस, झूठ सब दुर्गुणों को त्याग दो तब ईश्वर की ओर जा सकोगे।

—2—

धोती नेती बस्ती पाओ,
आसन पदम् जुक्ति से लाओ।
कुम्भक कर रेचक करवाओ,
पहिले मूल सुधार, कारज हो सारा है।। कर नैनो।2।

कबीर साहब कहते हैं अपना रहन सहन (साफ करो) ठीक करो, वह योगियों को कहते हैं कि गुदा चक्र को साध कर स्वास को भर कर ठहराव कर साधना करना ही अभ्यास है, यह योगियों का अभ्यास है।

—3—

मूल कॅवल दल चतुर बखानो,
कलिंग जाप लाल रंग मानो।
देव गणेश तहॅ रूपा थानो,
ऋद्धि सिद्धि चॅवर ढुलारा है। कर नैनो।3।

कबीर साहब कहते हैं कि सबसे पहले मूल चक्र है। वह गुदा चक्र है, वहॉ का मालिक गणेश देवता हैं। यहॉ पर योगी लोग कलिंग–कलिंग का जाप करते हैं। यहॉ चार दल का कमल है जिसका रंग लाल है। वहॉ ऋद्धि सिद्धि सेवा करती हैं। कबीर दास जी कहते हैं कि लोग तो बाहर गणेश की मूर्ति बनाकर पूजा करते हैं, जबकि वह तो अन्तर में हैं।

—4—

वाद चक्र षटदल विसतारो,
ब्रह्म सावित्री रूप निहारो।
उलट नागिनी का सिर मारो,
तहॉ शब्द ओंकारा है। कर नैनो।4।

कबीरदास कहते हैं कि गुदा चक्र को पार कर योगीजन इस चक्र में आते हैं। वहॉ छः दल का कमल है। ब्रह्मा तथा सावित्री यहॉ के देवता है। गणेश या गुदा चक्र में तो पृथ्वी तत्व है। इस स्थान पर पानी का तत्व है। यह उत्पत्ति का मूल स्थान है। यहॉ एक नाड़ी है जो नागिन की तरह है जिसे कुन्डलनी शक्ति कहते हैं।जिस समय साधक इस इन्द्रिय चक्र को पार करता है, वहॉ ओउ्म –ओउ्म का शब्द सा होता है।

—5—

नाभि अष्ट कॅवल दल साजा,
सेत सिंहासन विष्णु विराजा।
हिरिंग जाप तासु मुख गाजा,
लक्ष्मी शिव आधारा है। कर नैनो।5।

कबीर साहब कहते हैं कि इसके आगे आठ दल का कमल है जो कि नाभी में है, जहॉ श्रष्टि का पालन करता विष्णु भगवान देवता है। यहॉ का रंग सफेद है। यहॉ भगवान विष्णु की शक्ति है जो सारे शरीर का पालन पोषण कर रही हैं। यहॉ योगीजन हिरिंग का जाप करते हैं। मनुष्य एक उल्टे वृक्ष के समान है। संसार में वृक्ष नीचे जहॉ से शक्ति

पाते हैं, परन्तु मनुष्य ऊपर मस्तिष्क से ही शक्ति प्राप्त करता है। अर्थात इस नाभी चक्र को हृदय चक्र से ही शक्ति मिलती है जहॉ का स्वामी शिव है।

—6—

द्वादस कॅवल हृदय मे माहीं,
जहॉ गौरी शिव ध्यान लगाई।
सोहं शब्द तहॉ धुन छाई,
गण करैं जै जैकारा है। कर नैनो।6।

कबीर दास कहते हैं कि हृदय में बारह दल का कमल है वहॉ के देवता शिव हैं। यहॉ बैठकर योगीजन सोहं का जाप करते हैं और जय जयकार होती है। अर्थात यह प्रेम का स्थान है। यहॉ का अभ्यासी प्रेम करता है।

—7—

षोडश कॅवल कण्ठ के माहीं,
तेहि मध्य बसे अविद्या बाई।
हरि हर ब्रह्मा चॅवर ढुराई,
जहॅ श्रयॅ नाम उच्चारा है।। कर नैनो।7।

कबीर दास कहते हैं यहॉ कंठ` सोलह दल का कमल है, यहॉ की शक्ति को दुर्गा या देवी का स्थान कहते हैं, यहॉ पर त्रिगुणात्मक शक्ति विष्णु शिव तथा ब्रह्मा तीनों को मिलौनी है। योगी लोग यहॉ श्री—श्री का जाप करते हैं। यहॉ माया के दो स्वरूप विद्या अर्थात शुद्ध बुद्धिमाया तथा अविद्या मलिन माया रहती है। शुद्धबुद्धि माया दो दल कमल आज्ञा चक्र से ऊपर रहती है।

—8—

तापर कंज कॅवल है भाई,
बग भौंरा दुई रूप लखाई।
निज मन करत तहॉ ठकुराई,
सो नैनन पिछवारा है।। कर नैनो।8।

कबीरदास कहते हैं ऑखों से ऊपर दो दल का कमल है जहॉ बगुला रूपी जीवात्मा तथा भौंरा रूपी पिण्डी मन का निवास है। इन

ऑखों के पीछे निजमन अर्थात शुद्ध या ब्रह्माण्डी मन की सत्ता है, यही आज्ञाचक्र है।

नोटः— योगीजन प्रायः यहॉ समाप्त करते हैं और सूफी तथा सन्तों का परमार्थ यहॉ से आरम्भ होता है। हमारे अधिष्ठाता परम् पूज्य लालाजी ने कहा है जहॉ सब का अन्त है, वहॉ से हम शुरू करते हैं। हमारा आखिरी स्थान वह है जहॉ तमन्नाओं की जेब खाली है।

—9—

कॅवलन भेद किया निर्वारा,
यह सब रचना पिण्ड मॅझारा।
सतसंग कर सतगुरु सिर धारा,
कह तत्तनाम उच्चारा है।।कर नैनो।9।

कबीर साहब कहते हैंकि अब तक जिस रचना का वर्णन किया गया है, वह सब इसी पिण्डी शरीर में है। योगीजन इसी स्थान तक तप तथा योग के कठिन परिश्रम से पहॅुचते हैं। इससे ऊपर के स्थान उन्हें नहीं मालूम। यहॉ से ऊपर की चढ़ाई शुरू होती है। कबीर साहब कहते हैं कि बिना सत्गुरु धारण किए और बिना उनका सतसंग या शोहबत और सतनाम जो गुरु ने दिया है, सच्चे मालिक की प्राप्ति नहीं होती। सन्तों का मार्ग ऊपर है और वह सतगुरू के उपदेश या सतसंग से मिलता है।

—10—

ऑख कान मुख बन्द कराओ,
अनहद झींगा शब्द सुनाओ।
दोनों तिल एक तार मिलाओ,
तब देखो गुलजारा है।। कर नैनो।10।

कबीर साहब सन्तों के अभ्यास की विधि बताते हैं। ऑख, कान और मुॅह को बन्द करो, इसका अर्थ है कि इन अपनी ज्ञान इन्द्रियों को अन्तर्मुखी करो, इनसे अन्तर में बैठे ईश्वर को देखों, दोनों तिल भौहों के पीछे अपनी आत्मा की धार को जमा दो जिससे शिव नेत्र या तीसरा नेत्र खुल जाता है तब प्रकाशपुन्ज दिखाई पड़ेगा और अन्तर का शब्द सुनाई देगा।

—11—

चॉद सूर एकै घर लाओ,
सुषमन सेती ध्यान लगाओ।
त्रिबेनी के संघ समाओ,
भोर उतर चल पारा है।। कर नैनो।11।

बीर दास जी कहते हैं जब साधक तीसरे तिल के ऊपर प्रवेश करता है तो तारा मण्डल में प्रवेश करता है, जहॉ चन्द्र और सूर्य जैसी प्रकाश है, उसके पश्चात् सूक्ष्म शुसुम्ना नाड़ी में से होकर जाना पड़ता है। यहॉ त्रिलोकीनाथ यानी तीनों लोकों का नाथ है जिसे निरंजन भी कहते हैं। यहॉ से तीन रास्ते हैं, योगियों या प्राणायम के अभ्यासियों का यह अन्तिम स्थान है। इसी को कबीर साहब ने त्रिवेनी कहा है। योगियों या प्राणायाम के अभ्यासियों का यह अन्तिम स्थान है। प्रयाग की त्रिवेणी रूपक है गंगा सीधी बह रही है, संतों का यही रास्ता है। सन्तों का रास्ता बीच का सीधा रास्ता है।

—12—

घण्टा शंख सुनो धुन दोई,
सहस कॅवल दल जगमग होई।
ता मध्य करता निरखो सोई,
बंकनाल धस पारा है।।कर नैनो।12।

इस पद में कबीर साहब चक्र का वर्णन कर रहे हैं जिसका नाम सहसदल कॅवल है। इस स्थान पर बहुत तेज प्रकाश है। यहॉ घण्टा शंख की बड़ी मनोहर धुन सुनाई दे रही है और कॅवल की एक सहस्त्र पंखुड़िया प्रकाश फैला रही हैं। इस सहसदल कॅवल के बाद त्रिकुटी का स्थान है जो बहुत ही सूक्ष्म है जिसको संतों ने बंकनाल का नाम दिया है। इस त्रिकुटी के स्थान पर बैठकर सारे शरीर रूपी विशाल देश का नियंत्रण करता है।

—13—

डांकनी सॉकनी बहु किलकारें,
जम किंकर धर्म दूत हॅकारें।
सत्तनाम सुन भागे सारे,

जब सतगुरु नाम उचारा है।।कर नैनो।13।

कबीर साहब कहते हैं कि ऊपर वर्णित सभी का स्वामी काल है। इसी काल ने आत्मा को कैद कर रखा है। जहॉ पर डाकिनी और सॉकिनी अर्थात माया रूपी शैतान और विरोधी शक्तियॉ बहुत परेशान करती हैं। जब सतगुरु दया करके सतनाम का उच्चारण करते हैं जो स़च्चे मालिक का नाम है, तब सब माया के आकर्षण की बाधायें समाप्त हो जाती हैं। संतो का विचार है कि माया जबरदस्त परीक्षा लेती है कि परमात्मा का कौन पुत्र केवल उसी को चाहता है। जब साधक खरा उतरता है तब यही मॉ प्रकृति (माया का सत रूप) उसकी सहायता करता है।

—14—

गगन मंडल बिज ऊर्धमुख कुइयॉ
गुरुमुख साधु भर भर पिया।
निगुरु पयास मरें बिन किया,
जाके हिय ॲधियारा है।। कर नैनो।14।

इस पद में कबीर साहब त्रिकुटी का वर्णन गुढ़ शब्दों में करते हुए कहते हैं कि गगन मण्डल में एक ऐसी कुइयॉ है जिसका मुॅह उल्टा होता है। उकने कहने का अर्थ है कि जो अपने गुरु का सहारा लेकर इस स्थान पर पहॅंच गया उसको अब दुनिया के चाटक नाटक भोग की इच्छा नहीं रहती। इसी को कबीर जी ने ऊर्ध्वमुख यानी उल्टा मुख कहा है। इस स्थान या कुइयॉ में आनन्द का ऐसा स्रोत है जिससे वह संतुष्ट होकर पी रहा है, परन्तु जिनको गुरु का सहारा नहीं है, उनका हृदय अंधकार से पूर्ण है और वे इस ईश्वरीय आनंद के लिए तरसते रहेंगे। सन्तों का कहना है कि जिसने इस स्थान तक की रसाई कर ली, वह इस भवसागर में लौट कर नहीं आता।

—15—

त्रिकुटी महल में विद्या सारा,
घनहर गरजें बजे नगारा।
चतुर कॅवल मंझार शब्द ओंकारा है।। कर नैनो।15।

इस पद्य में कबीरदास जी कहते हैं कि सहस दल कॅवल के ऊपर त्रिकुटी का स्थान है। यहॉ सब विद्या अर्थात ज्ञान है। इस स्थान बादलों की मीठी मीठी हल्की गरज जैसी ध्वनि है तथा प्रकाश दोनों है। उस

स्थान पर शब्द एवं प्रकाश दोनों है। यहॉ के प्रकाश का रंग लाल है, ऐसा प्रतीत होता है जैसे सूर्य उदित हो रहा है। बादलों की गरज की ध्वनि मृदंग बाजे जैसी हो रही है और ¬ शब्द स्पष्ट विराजता है।

—16—

साध सोई जिन यह गढ़ लीन्हा,
नौ दरवाजे परमट चीन्हा।
दसवॉ खोल जाय जिन दीन्हा,
जहॉ कुफल रहा मारा है।।कर नैनो।16।

कबीर साहब कहते हैं कि वही सच्चा साधू है जो इस स्थान त्रिकुटी तक पहुॅच गया क्योंकि यहॉ तक की रसाई बहुत कठिन है। संत कबीर ने इसकी तुलना एक किले से की है जिस तक पहुॅचने के लिए नौ दरवाजे पार करने पड़ते हैं और दसवें पर ताला पड़ा है अर्थात कठिन दरवाजा है जो साधू इस दरवाजे के ताले को खोल लेता है वही पूर्ण साधु कहलाने का अधिकारी है। इस का भेद केवल सत्गुरु ही जानते हैं और उन्हीं की दया से यह दरवाजा खुल सकता है। जब यह दरवाजा सद्गुरु की दया से खुल जाता है तो अंतर दर्शन होते हैं। सूफी इसको 'कश्फ' कहते हैं।

—17—

आगे सेत सन्न है भाई,
मान सरोवर पैठि अन्हाई।
हंसन मिल हंसा होई जाई,
मिलै जो अमी अहारा है।। कर नैनो।17।

कबीर दास जी कहते हैं भाई नवे चक्र से पहले एक सेत सुन्न या अमृतसर है। कबीर साहब कहते हैं यहॉ एक सुन्दर मानसरोवर है जहॉ अमृत भरा है। वहॉ इस सरोवर में हंस निवास करते हैं जो मोती चुगते हैं जो सार सार को ही आहार बनाते हैं और असार को छोड़ देता है। इस स्थान पर आकर आत्मा बिल्कुल अपने स्वरूप में निर्मल रहती है और सच्चा ज्ञान जो अमृत के समान है, प्राप्त हो जाता है।

—18—

किंगरी सारंग बजै सितारा,
अक्षर ब्रह्म सुन्न दरबारा।
द्वादस भानु हंस उजियारा,
षटदल कंवल मंझार शब्द ररंकारा है।।कर नैनो।18।

इस स्थान पर जो शब्द है वह बहुत ही रसीली है जैसे सारंगी सितार बज रहा हो, यहाॅ छः दल का कमल है और ऐसा प्रतीत होता है कि बारह सूर्य एक साथ प्रकाशित होकर प्रकाश फैला रहे हैं। इस स्थान को सुन्न का स्थान कहते हैं। कबीर साहब कहते हैं यद्यपि आत्मा यहाॅ पूर्ण प्रकाशित है तथापि जब तक सद्‌गुरु सहायता न करे तब तक वह इस स्थान को पार नहीं कर सकती है।

—19—

महासुन्न सिन्ध विषमी घाटी,
बिन सतगुरु पावे नहि बाटी।
व्याधर सिंह सर्प बहु काटी,
तहं सहज अचिंत पसारा है।। कर नैनो।19।

कबीर साहब कहते हैं कि इसके बाद महासुन्न का स्थान है जो इतना विषम है कि बिना सतगुरु इसे पार नहीं कर सकते हैं। इस मण्डल में शुद्ध माया का राज्य है। यहाॅ की रचना इतनी सुन्दर और मनमोहक है कि मनुष्य उसको छोड़ ऊपर जाना नहीं चाहता है। कबीर साहब कहते हें जैसे अजगर सर्प, शेर, बाघ इत्यादि हिंसक पशु अपने आहार को खींचते हैं, और जाने नहीं देते, उसी प्रकार यह महासुन्न मण्डल अभ्यासी को आगे जाने नहीं देता। केवल सतगुरु ही सहायक है, यहाॅ गुरु देह स्वरूप नहीं शब्द स्वरूप हो जाता है। यहाॅ रुका हुआ अभ्यासी यहाॅ जो आनन्द और सुख अनुभव करता है, वह उसी में भ्रमित हो जाता है।

—20—

अष्ट दल कॅवल पारब्रह्म भाई,
दहिने द्वादस अचिंत रहाई।
बायेंद स दल सहज समाई,
यो कॅवलन निरवारा है।। कर नैनो।20।

इस महासुन्न के चक्र पर आठ दल का कंवल है। इसके दाहिने ओर बारह दल का कंवल है और बायीं ओर दस दल का कंवल है। कबीरदास जी कहते हैं कि पारब्रह्म के इस स्थान के कॅवलों की यही रचना है।

–21–

पॉच ब्रह्म पॉचो अण्ड बीनो,
पॉच ब्रह्म निःअक्षर चिन्हो।
चार मुकाम गुप्त तहं कीन्हो,
जा मध्य बंदीवान पुरुष दरबारा है।।कर नैनो।21।

कबीर साहब कते हैं कि इस महासुन्न के ऊपर भॅवर गुफा है, जहॉ पॉच खण्ड हैं और इन मण्डलों में अपने अपने ब्रह्म हैं। इसके अलावा चार स्थान ऐसे भी हैं जिनकों संतों ने गुप्त रखा है। जो लोग इस स्थान में रहते हैं, उन्हे बन्दीवान पुरुष कहते हैं। इन बंदीवान पुरुष को यद्यपि कोई कष्ट नहीं है पर आगे उन्नति नहीं कर सकते हैं। जो अभ्यासी इस स्थान को पहॅुचेंगे,उन्हें स्वयं यह सब प्रकट हो जायेगा। ऐसी आत्मायें अक्सर सत्संग में आकर बैठ जाती हैं और संतों से प्रार्थना करती हैं अपनी उन्नति के लिए।

–22–

दो पर्वत की सन्धि निहारो,
भॅवर गुफा वहॅ सन्त पुकारो।
हंसा करते केल अपारो,
तहॉ गुरन दरबारा है।।कर नैनो।22।

कबीर दास जी कहते हैं कि यह सचखण्ड का प्रवेश का दरवाजा है। यह भॅवर गुफा है। संतों ने इसे सोहं का देश कहा है। सोहं का अर्थ है जो तू है वही मैं हूॅ। मुसलमान संत इसे मुकामे अनाहू कहते हैं। यह महामाया का स्थान है। प्रकृति माता यहॉ भी इत्तहान लेती हें। इस स्थान पर दोनों तरफ ऊॅचे– ऊॅचे पहाड़ हैं उसके बीच यह रास्ता जा रहा है। कबीर कहते हैं यहॉ आत्मा का स्वरूप बिल्कुल निर्लेप होकर हंस के समान हो जाता है। यहॉ सद्गुरुओं का दरबार है।

–23–

सहस अठासी दीप रचाए,
हीरे पन्ने लाल जुड़ाये।
मुरली बसत अखण्ड सदाए,
तहं सोहं झनकारा है।।कर नैनो।23।

कबीर दास ने इस मण्डल की सुन्दरता हीरे पन्ने लाल जैसे रत्नों से की है। वे कहते हैं कि इस मंडल में अट्ठासी हजार दीप हैं और हीरे पन्ने, लाल जैसे अमूल्य अवस्था वाली आत्मा यहॉ निवास करती हैं। यहॉ मुरली के जैसे सुरीली अखण्ड स्वर का झंकार है और सोहं शब्द की गूॅज है।

–24–

सोहं हद तजी जब भाई,
सत्तलोक की हद पुनि आई।
उठत सुगंध महा अधिकाई,
जाको वार न पारा है।।कर नैनो।24।

कबीर साहब कहते हैं कि जब सोहं शब्द के आगे चले अब सतलोक आ गया। सतलोक की महिमा का वर्णन कोई नहीं कर सकता क्योंकि इस जड़ माया रचित संसार में इसकी कोई उपमा नहीं मिलती। यह अत्यंत शान्ति प्रशन्नता और प्रेम भरा स्थान है। कबीर दासजी कहते हैं यहॉ ऐसी सुगंध है जिसको वर्णन नहीं किया जा सकता है।

–25–

षोडस भानु हंस के रूपा,
बीना सत धुन बजै अनूपा।
हंसा करत चॅवर सिर भूपा,
सत्त पुरुष दरबारा है।। कर नैनो।25।

कबीर साहब कहते हैं कि यहॉ इस सचखण्ड में सोलह सूर्य जैसे एक साथ उदय हो गये हों इतना तेज प्रकाश है। यहॉ ऐसा मधुर शब्द हो रहा है जैसे वीणा बज रही हो जो बड़ी आकर्षण है जहॉ जन्म–मरण से मुक्त हंस रूपी संत अपने सच्चे मालिक के सेवा में रहते हैं। कबीर साहब ने इसी सेवा को चंवर डुलाने की उपमा दी है। इसी लोग से सन्त पुरुष पृथ्वीलोक में आके लोगों को मुक्ति का रास्ता बताते हैं और मुक्ति दिलाके वापस अपने लोग चले जाते हैं।

—26—

कोटिन भानु उदय जो होई,
ऐते ही पुनि चन्द्र लखोई।
पुरुष रोम सम एक न होई,
ऐसा पुरुष दीदारा है।।कर नैनो।26।

कबीर साहब कहते हैं इस सतलोक में सच्चे मालिक के दर्शन होते हैं। कबीर साहब कहते हैं करोड़ो सूर्य चन्द्रमा एक साथ भी जगमगाने लगे तब भी उस सतपुरुष दयाल के एक रोम के बराबर नहीं होता ऐसे उस सतपुरुष का दर्शन है। यह केवल पूरे सन्त सद्‌गुरु की विशेष कृपा पर निर्भर है।

—27—

आगे अलख लोक है भाई,
अलख पुरुष की तहं ठकुराई।
अरबन सूर रोम सम नाहीं,
ऐसा अलख निहारा है।। कर नैनो।27।

कबीर साहब कहते हैं इस सतलोक में आगे भी एक लोक है जिसका नाम 'अलख' है। यहॉ उसी अलख पुरुष परमात्मा का राज्य है और अरबों सूर्य चन्द्रमा मिलकर भी उसके एक रोम के प्रकाश के बराबर नहीं होता।

—28—

ता पर अगम महल एक साजा,
अगम पुरुष ताहि का राजा।
खरगन सूर रीम इक लाजा,
ऐसा अगम अपारा है।। कर नैनो।28।

अलख से ऊपर अगम पुरुष का स्थान आता है। यहॉ का प्रकाश भी खरबों सूर्य चन्द्रमा के प्रकाश से कही अधिक है।

—29—

ता पर अकह लोक है भाई,
पुरुष अनामी तहाँ रसाई।
जो पहुँचे जानेगा वाही,
कहन सुनन से न्यारा है।। 29।

अलख लोक से आगे अनामी पुरुष का धाम है, इसका नाम 'अकहलोक' है। यहाँ का वर्णन कहने सुनने में नहीं आ सकता जो पहुँचेगा वहीं इसका आनन्द जान सकता है। यह अन्तिम स्थान है, जहाँ संतजन चुप हो जाते हैं।

—30—

काया भेद किया निर्वारा,
यह सब रचना पिण्ड मँझारा।
माया अवगत जाल पसारा,
सो कारीगर भारा है।।कर नैनो।30।

कबीर दास जी कहते हैं इस मनुष्य शरीर में जितनी रचना उस सब का भेद हमने बता दिया, यह सारी रचना तुम्हारे शरीर में है। समस्त भण्डार तुम्हारी सम्पत्ति है। माया ने ना समझ पाने वाला मायाजाल फैला रखा है। वह बड़ा भारी कारीगर है।

—31—

आदि माया कीन्ही चतुराई,
झूँठी बाजी पिण्ड दिखाई।
अवगति रचना रची अण्ड माहीं,
ता का प्रतिबिम्ब डारा है।।कर नैनो।31।

प्रभु की आदि माया अर्थात काल ने बड़ी चतुराई पूर्वक इस मनुष्य की रचना की है। ब्रह्माण्ड के छः चक्रों की साया नीचे के छः चक्रों पर पड़ती है, जिन पर यह प्रतिबिम्ब पड़ रहा है, वह छः चक्र पिण्डशरीर यानी स्थूल के हैं और छःचक्र सूक्ष्म के हैं। काल का अभिप्राय यह है कि कोई जीव इस मायाजाल से निकल कर सचखण्ड न पहुँचे, इसीलिए तरह—तरह के प्रलोभन देती है।

—32—

शब्द विंहंगम चाल हमारी,
कहें कबीर सतगुरु दई तारी।
खुले कपाट शब्द झनकारी,
पिण्ड अण्ड के पार सो देश हमारा है।।।कर नैनो।32।

कबीर साहब के अनुसार सन्तों का मार्ग या उनका मार्ग विहंगम मार्ग है। यहॉ से आत्मा को सचखण्ड ले गये। कबीर साहब कहते हैं कि भाई यह मार्ग मुझे सतगुरु ने दिया। सतगुरु की कृपा से मैं इस देश तक पहुॅंच सका और उन्होंने मेरा उद्धार कर दिया। इस प्रकार मैं सतगुरु का सहारा लेकर इस अण्ड एवं पिण्ड के पार पहॅंच गया जो सच्चे मालिक का देश है और इसी शरीर रूपी महल में उस परमात्मा के दर्शन को कबीर साहब ने कहा है जितने सन्त गुजरे हैं, सब ही ने उपरोक्त घट मार्ग का यही वर्णन किया है।

नक्शबन्दिया सिलसिले के सन्तों का विश्राम गृह

विश्राम स्थल– परम सन्त	मालिके कुल	अनामी, लामकां
अगम पुरुष	अगम	अत्यंत गोपनीय
अलख पुरुष	अलख	अत्यंत गोपनीय, किसी भी संत सतगुरु ने उपरोक्त तीनों लोगों का भेद नहीं खोला।
6. शब्द का जहूर इसी स्थान से हुआ, महानाद, सारशब्द, सतशब्द, सतपुरुष, सन्त सदगुरु, आदि यह मुकाम महाप्रलय की सीमा के बाीर है। परम संतों का दरबार यही है।	सतलोक	बीन की ध्वनि होती है। आलमे हूत तनसुख से मुक्ति ''हक''
5. सोहंपुरुष	भॅवरगुफा	मुरली की ध्वनि हूतलहूत ''अनाहू''
4. घटाटोप अंधकार छाया रहता है। बिना सतगुरु के इसे कोई पार नहीं कर सकता	महासुन्न	यहॉ पर शब्द गुप्त है।
3. प्रकृति पुरुष का जहूर इसी स्थान से हुआ, मानसरोवर यहीं है। पारब्रम्ह पद, अक्षरपुरुष गुणातीत स्थिति, पूरा परमहंस।	सुन्न	सारंगी, किंगरी आदि मुकाम हाहूत ''रब'
2. महाकाश, प्राण तथा मन का उद्‌गम स्थान, ब्रम्हाण्डी मन, प्राण पुरुष, खुदाये अजीम, अर्शेअजीम, ओंकार पद, हंस, गगनापुर आदि। मूलाधार से त्रिकुटी तक के लोक प्रलय में नष्ट हो जाते हैं।	त्रिकुटी	मृदंग की ध्वनि योगेश्वर औतार, दर्जे आला जैसे राम, कृष्ण, चारों वेद यही से प्रकट हुए। ब्रम्ह या काल का पर्दा हटता है। आलमे–लाहूत, ''अल्लाह''
1. निरंजन ज्योति, शक्ति सहित ब्रम्हा, विष्णु, महेश का जन्म, इसके निचले भाग में होता है। इसी स्थान से तन मात्राओं का उदय हुआ है।	सहस्त्रदल कॅवल	घंटा, शंख, की ध्वनि माया का परदा हटता है। खुदा नाम इसी मुकाम का है।
सुरत मन, जीव का मुकाम जाग्रत अवस्था में यही है। इसी मुकाम से रूह शरीर में उतरती है। दोनों ऑखों के बीच अन्दर तीसरा तिल है।	आज्ञा चक्र	इस मुकाम पर शरीर चेतना रहित हो जाता है। फिर भी प्राणों की क्रिया बदस्तूर जारी रहती है। जीतेजी मरने की यह क्रिया जड़ से चेतन अलग करने की क्रिया है। यहॉ से राह संतमत जारी। नैन नगर बिच मारन धारी।

नोटः— **1 से 6 मुकाम उल्दी (ब्रह्माण्ड के मकाम और पार ब्रम्हाण्ड के मुकाम हैं) इसी तरह नीचे पिण्ड में जो 6 चक्रों के प्रतिबिंब हैं, जिन्हे सिफली कहते हैं, यही षटचक्र कहलाते हैं। स्थल पर्दा ऑखों से नीचे है। सूक्ष्म पर्दा सहस्रदल कमल में है और कारण पर्दा ब्रह्मलोक या त्रिकुटी में है। पिण्डी मन का स्थान ऑखों के पीछे और हृदय में है। इसी के द्वारा दुनिया का कारोबार चल रहा है।**

❋❋❋

वेद में ब्रह्म विद्या

वेदों में दो विद्या है– एक अपरा, दूसरी परा। इनमें से अपरा यह है कि जिससे पृथ्वी और तृण से लेकर प्रकृति पर्यन्त पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक–ठीक कार्य रूप सिद्ध होता है और दूसरी परा कि जिससे सर्वशक्तिमान ब्रह्म की यथावत् प्राप्ति होती है। यह परा विद्या अपरा विद्या से अत्यंत उत्तम है, क्योंकि अपरा का ही उत्तम फल परा विद्या है।

अन्यच्च–

तद्विष्णोः परम्पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। किंवीव चक्षुरात्तम।

ऋग्वेदे अष्टके 1 अध्याय 2 वर्गे, 7 ।।मन्त्र।।

यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति याऽविवेश भुवनानि विश्वा।

प्रजापतिः प्रजया सारराणास्त्रीणि ज्योतिषि सचते स षोडशी।।

भावार्थः– और भी इस विषय में ऋग्वेद का प्रमाण है कि (तद्वि) (विष्णुः) अर्थात् व्यापक जो परमेश्वरहै, उसका (परम्) अत्यंत उत्तम आनन्दस्वरूप (पद) जो प्राप्ति होने के योग्य अर्थात जिसका नाम मोक्ष है,उसको (सूर्य) विद्वान लोग (सद्प्श्यन्ति) सब काल में देखते हैं। वह कैसा है कि सबमें व्याप्त हो रहा है और उसमें देश काल और वस्तु का भेद नहीं है अर्थात उस देश में है और इस देश में नहीं, उस काल में था अतथा इस काल में नहीं, उस वस्तु में है और इस वस्तु में नहीं। इसी कारण वह पद सब जगह में सबको प्राप्त होता है,क्योंकि वह ब्रह्म सब ठिकाने परिपूर्ण है। इसमें यह दृष्टांत है कि जैसे सूर्य का प्रकाश आवरण रहित आकाश में व्याप्त होता है और जैसे उस प्रकाश में नेत्र की दृष्टि व्याप्त होती है, इसी प्रकार परब्रह्म पद भी स्वयं प्रकाश, सर्वत्र व्याप्तवान हो रहा है। उस पद की प्राप्ति से कोई भी प्राप्ति उत्तम नहीं है। इसलिए चारों वेद उसी की प्राप्ति कराने के लिए विशेष करके प्रतिपादन कर रहे हैं।

ठस विषय में वेदान्त शास्त्र में व्यास मुनि के सूत्र का भी प्रमाण है– (ततु समन्वयात्) सब वेद वाक्यों में ब्रह्म का ही विशेष करके प्रतिपादन है। कहीं–कहीं साक्षात रूप और कहीं–कहीं परम्परा से, इसी कारण से वह ब्रह्म वेदों का परम् अर्थ है।

इस विषय में यजुर्वेद का भी प्रमाण है कि–(यस्मान्य जा0) जिस परब्रह्म से (अन्यः) दूसरा कोई भी (पराः) उत्तम पदार्थ (जातः) प्रकट (नास्ति) अर्थात् नहीं है (यऽविवेश भु0) जो सब विश्व अर्थात् सब जगह में

व्याप्त हो रहा है। (प्रजापतिः प्र0) वही सब जगत का पालनकर्ता और अध्यक्ष है। जिसने (त्रीणि ज्योतिष) अग्नि,सूर्य और बिजली, इन तीन ज्योतियों को प्रजा के प्रकाश होने के लिए (सचते) रचके संयुक्त किया है, और जिसका नाम (षोडशी) है अर्थात 1.ईक्षण जो यर्थात विचार 2, प्राण जो कि सब विश्व का धारण करने वाला, 3. श्रद्धा सत्य में विश्वास, 4. आकाश, 5. वायु, 6. अग्नि, 7. जल, 8. पृथ्वी, 9. इन्द्रिय, 10. मन अर्थात ज्ञान, 11. अन्न, 12. वीर्य अर्थात् बल और पराक्रम, 13. तप अर्थात धर्मानुष्ठान सत्याचार, 14. मन्त्र अर्थात वेदविद्या, 15. कर्म अर्थात् सब चेष्ठा, 16. नाम अर्थात दृश्य और अदृश्य पदार्थों की संबा, ये सोलह कला कहलाती है। ये सब ईश्वर की बीच में है। इससे उसको षोडशी कहते हैं। इन षोडश कलाओं का प्रतिपादन प्रश्नोपनिषद के छठें प्रश्न में लिखा है।

इससे परमेश्वर ही वेदों का मुख्य अर्थ है और उससे पृथक जो यह जगत है सो वेदों का गौण अर्थ है और इन दोनों में से प्रधन का ही ग्रहण होता है। इससे क्या आया कि वेदों का मुख्य तात्पर्य परमेश्वर की ही प्राप्ति कराने और प्रतिपादन करने में है। उस परमेश्वर के उपदेश रूप वेदों से कर्म, उपासना और ज्ञान उन तीनों काण्डों का इस लोक और परलोक के व्यवहारों के फलों की सिद्धि और यथावत उपकार करने के लिए सब मनुष्य इन चार विषयों के अनुष्ठानों में पुरुषार्थ करें, यही मनुष्य देह धारण करने के फल हैं।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत।
स दाधार पृथ्वी द्यामु तेमाम्, कस्मै देवाय हविषा विधेम।।1।।
ऋ0अ0 8 अ0 7ब 3 म0 ।1।
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुष पादोऽस्मेहामवत्पुनः।
ततो विष्वड् व्यक्रामत् साशनानशने अभि।।4।।

भावार्थः– (त्रिपादूर्ध्व उदैत्पु0) पुरुष जो परमेश्वर है, सो पूर्वोक्त त्रिपाद जगत से ऊपर भी व्यापक हो रहा है तथा सदा प्रकाश स्वरूप सबके भीतर व्यापक और सबसे अलग भी है। (पादोस्येहाभवत्पुनः) इस पुरुष की अपेक्षा से यह सब जगत किंचित मात्र देश में है और जो इस संसार के चार पाद होते हैं, वे सब परमेश्वर के बीच में रहते हैं।

इस स्थूल जगत् का जन्म और विनाश सदा होता रहता है। पुरुष तो जन्म विनाश आदि धर्म से अलग और सदा प्रकाशमान है। (ततो

विवड व्यक्रमत्) अर्थात यह नाना प्रकार का जगत् उसी पुरुष के सामर्थ्य से उत्पन्न हुआ है ।

सो दो प्रकार का है। एक चेतन, जो कि भोजनादि के लिए चेष्टा करता है और जीव संयुक्त है और दूसरा अनशन अर्थात जो जड़ और भोजन के लिए बना है, क्योंकि उसमें ज्ञान ही नहीं है और अपने आप चेष्टा भी नहीं कर सकता। परन्तु उस पुरुष का अनन्त सामर्थ्य ही इस जगत के बनाने की सामग्री है कि जिससे यह सब जगत उत्पन्न होता है। सो पुरुष सर्वहितकारक होके उस दो प्रकार के जगत को अनेक प्रकाश से आनन्दित करता है। वह पुरुष इसका बनाने वाला संसार में सर्वत्र व्यापक होके, धारण करके देख रहा है और वही सब जगत् का सब प्रकार से आकर्षण कर रहा है।

ततो विराडजायत विराजो अधिं पुरुषः
स जातो आतो अत्यरिच्यित पश्चाद भूमिमथोपुरः ।।5।।

भावार्थः– (ततो विराडजायत) विराट जिसका ब्रह्माण्ड के अलंकार से वर्णन किया है जो उसी पुरुष के सामर्थ्य से उत्पन्न हुआ है, जिसको मूलप्रकृति कहते हैं, जिसको शरीर ब्रह्माण्ड के समतुल्य सूर्य चन्द्रमा नेत्रस्थानी हैं, वायु जिसका प्राण और पृथ्वी जिसका पग है, इत्यादि लक्षण वाला जो यह आकाश है, विराट कहलाता है। वह प्रथम कला रूप परमेश्वर के सामर्थ्य से उत्पन्न होके प्रकाशमान हो रहा है। (विराजो अधि0) उस विराट के तत्वों के पूर्व भागों से सब अप्राणी और प्राणियों का देह पृथक–पृथक उत्पन्न हुआ है, जिसमें सब जीव वास करते हैं और जो देह उसी पृथ्वी आदि के अवयव अन्न आदि औषधियों से वृद्धि को प्राप्त हेता है (स जातो अत्यरिचयत) सो विराट परमेश्वर से अलग और परमेश्वर भी इस संसार रूप देह से सदा अलग रहता है। (प्श्चाद भूमिमथो पुरः) फिर भूमि आदि जगत को प्रथ्मा उत्पन्न करके प्श्चात् जो धारण कर रहा है। ।।5।।

विज्ञातवाच्यवाचकत्वस्य योगिनः
तज्जपस्यदर्थभावनम ।।17अ0। (पा01) सू0 ।।28।।
स्वाध्यायाद्योग मासीत योगात्स्वाध्यायमामनेत्।
स्वाध्याययोग सम्पत्या परमात्मा प्रकाशत् इति।। 17।।

भावार्थः– अब ईश्वर का लक्षण कहते हैं (क्लेशकर्म0) अर्थात इसी प्रकरण में आगे लिखे हैं जो अविद्यादि पांचक्लेश और अच्छे बुरे कर्मों की जो

वासना इन सबसे जो सदा अलग और बन्धरहित है, उसी पूर्ण पुरुष को ईश्वर कहते हैं, फिर वह कैसा है,जिससे अधिक वा तुल्य दूसरा पदार्थ कोई नहीं तथा जो सदा आनन्दज्ञानस्वरूप सर्वशक्तिमान है, उसी को ईश्वर कहते हैं। 13।।

क्योंकि (तत्र निरति0) जिसमें नित्य सर्वज्ञान है वही ईश्वर है, जिसके अनादि गुण अनन्त हैं, जो ज्ञानादि गुणों की पराकाष्ठा है, जिसके सामर्थ्य की अवधि नहीं और जीव के सामर्थ्य की अवधि प्रत्यक्ष देखने में आती है, इसलिए सब जीवों को उचित है कि अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए सदैव परमेश्वर की उपासना करते रहें।। 14।।

अब उसकी भक्ति किस प्रकार से करनी चाहिए, सो आगे लिखते हैं:–

(तस्व वा0) जो ईश्वर का ओंकार नाम है सो पिता पुत्र के सम्बन्ध के समान है और यह नाम ईश्वर को छोड़के दूसरे अर्थ का वाची नहीं हो सकता। ईश्वर के जितने नाम हैं, उनमें से ओंकार सबसे उत्तम नाम है।

इसलिए (तज्ज प0) इसी का जप अर्थात स्मरण और उसी का अर्थ विचार सदा करना चाहिए कि जिससे उपासक का मन एकाग्रता, प्रशन्नता और ज्ञानको यथावत प्राप्त होकर स्थित हो, जिससे उसके दृश्य में परमात्मा का प्रकाश और परमेश्वर की प्रेम भक्ति सदा बढ़ती जाये। 17।।

ये यज्ञेन दक्षिणया समक्ता इन्द्रस्य सख्यमभृतत्वमानश।
तेभ्यो भंद्रमडिंगरसो वो अस्तु प्रति मृम्णीत मानव सुमेधस।। 1।।
ऋ0अ0 8 अ02 व0 म0 1
स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विद्वान।
यत्र देव अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्येरन्त।।2।।
य0अ0 32 ।।2।।

भावार्थः– (स होवाच ए0) याज्ञवल्क्य कहते हैं हे गार्गी जो परब्रह्म नाश, स्थूल, सूक्ष्म, लघु, दीर्घ लाल, चिक्कन, छाया,अन्धकार, वायु, आकाश, संडग शब्द स्पर्श, गन्ध, रस, नेत्र, कण, वाक्, मन, तेज, प्राण, सुख, नाम, गोत्र, वृद्धावस्था, मरण, भय, आकार, विकास, संकोच, पूर्व, ऊपर, भीतर, वाह्य अर्थात बाहर, इन सब दोष और गुणों से रहित मोक्षस्वरूप है, वह साकार पदार्थ के समान किसी को प्राप्त नहीं होता और न कोई उसको मूर्त द्रव्य के समान प्राप्त होता है, क्योंकि वह सबमें परिपूर्ण होने वाला

कोई नहीं हो सकता जैसे मूर्त दृव्य को चक्षुरादि इन्द्रियों से साक्षात कर सकता है क्योंकि वह सब इन्द्रियों के विषयों से अलग और सब इन्द्रियों की आत्मा है।।13।।

तथा (ये यज्ञेन) अर्थात पूवोक्त ज्ञानरूप यज्ञ और दृब्यो की परमेश्वर को दक्षिणा देने से वे मुक्त लोग मोक्षमुख में प्रसन्न रहते हैं (इन्द्रस्थ) जो परमेश्वर के सख्य अर्थात मित्रता से मोक्ष भाव को प्रापत हो गये हैं, उन्हीं के लिए भद्र नाम सब सुख नियत किए गये हैं।

(अंगिरसः) अर्थात उनके जो प्राण है, वे (सुमेधसः) उनकी बुद्धि करे अत्यंत बढ़ाने वाले होते हैं और उस मोक्ष प्राप्त मनुष्य को पूर्वमुक्त लोग अपने समीप आनन्द में रख लेते हैं और फिर वे परस्पर अपने ज्ञान से एक दूसरे को प्रीतिपूर्वक देखते और मिलते हैं।

(स नो बन्धुः) सब मनुष्यों को यह जानना चाहिए कि वही परमेश्वर हमारा बन्धु अर्थात दुःख का नाश करने वाला (जनिता0) सब सुखों को उत्पन्न और पालन करने वाला है तथा वही सब कामों को पूर्णकर्ता और सब लोकों को जानने वाला है कि जिसमें देव अर्थात विद्वान लोग मोक्ष को प्राप्त होके सदा आनन्द में रहते हैं और वे तीसरे धाम अर्थात शुद्ध सत्य से सहित होके सर्वोत्तम सुख में सदा स्वछन्दता से रमण करते हैं।।2।।

चरित्र निर्माण

आत्मा की धार परमात्मा की तरफ जब चलती है तो चढ़ाई है, क्योकि धार का बहाव नीचे की तरफ यानि दुनिया की तरफ है। यह धार बड़ी फुरती से दुनिया की तरफ झुक जाती है, लेकिन यही धार जब परमार्थ की तरफ मोड़ी जाती है तो बड़ी मुश्किल से रागिब (उस ओर चलती) होती है और बड़ी कश्मकश (कठिनाई) होती है। कभी–रुझाान (ध्यान) ऊपर की तरफ जो जाता है और कभी धार एकदम से नीचे की तरफ हो जाती है, तब अभ्यासी परेशान और दुःखी हो जाता है, रोता है, घबराता है और सोचता है कि क्या गल्ती हो गयी जिसकी वज से ऐसी गिरावट हो गयी। यह गिरावट नहीं है, बल्कि अस्थायी रुझान जो ऊपर को था फिर मौका पाकर नीचे को हो गया। जिस मुकाम को एक बार इन्सान ने तय कर लिया चाहे कश्फी तरीका से ही होसय, गिरना मुश्किल है। जिस वक्त उस आनन्द की याद उसको आती है, वह वहीं फिर पहुॅचने की कोशिश करता है। लिहाजा (अतः) गिरावट का सवाल कम पैदा होता है, सिवाय इसके कि जना (परस्त्री गमन) हुआ हो। इस वक्त तो वाकई गिरावट मुमकिन है, वरन् मामली तौर से नहीं।

इस अभ्यास में फिर दुबारा उत्साह और धार को ऊपर ले जाने वाली बहुत सी ऐसी बातें हैं जो हमेशा मददगार होती हैं, जिन पर अभ्यासी को हमेशा को निगाह रखनी चाहिए। यह है भोजन, संगत, नियम और पवित्रता।

1. भोजनः– अगर खाना (भोजन) अच्छी कमाई का न होगा या अच्छे तरीके से न पकाया गया होगा, मतलब यह है कि अगर पकाने वाला आचरणहीन है तो वह खाना अभ्यासी को जरूर नुकसान देता है और सुरत की धार जो ऊपर को खिंच रही थी, उसका झुकाव नीचे को हो जाता है। अभ्यासी घबराने लगता है, क्योकि ख्यालात चंचल हो जाते हैं–चित्त एकाग्र नहीं होता है, तबियत बैठने को नहीं चाहती और अभ्यास में आनन्द भी नहीं आता है। जब तक उस खाने का असर शरीर में रहता है, जरूर यही हालत रहेगी। फौरन खाने को खाना पकाने वाले और दीगर (अन्य) चीजों को जो खाने से सम्बन्धित हैं, चेक करें। एक दो रोज या तो बिल्कुल ही फाका (व्रत) कर दें या बहुत ही सूक्ष्म भोजन

करें ताकि जिस्म बिल्कुल ही कमजोर पड़ जाये और खाने का असर जाये (नष्ट हो जाये) और आइन्दा इस किस्म के खाने से परहेज करें।

2.संगतः— जब सत्संग या किसी नेक सोहबत का असर यह है कि आत्मा की धार ऊपर की तरफ यानि अपने असल भण्डार की तरफ रजू हो (खिंच) सकती है, उसी तरह कुसंग का बुरा असर पड़ सकता है। लिहाजा अभ्यासी का दूसरा फर्ज यह हो जाता है कि फाका करे और साथ ही एकान्त इख्तियार करे ताकि अगर खाने के असर से अभ्यास में दिक्कत हुई तो फाका करने से दूर हो जायेगी और अगर कुसंगत से हुई है तो एकान्तवास से सुधार जावेगी।

वह जगह जहॉ रहता है, दो चार रोज के लिए तबदील कर दे। जिस जगह पर रहता है वहॉ से हट जावे। अनुभव यह बतलाता है कि जहॉ एक अरसा कुछ समय तक अभ्यासी रहता है, कभी—कभी वहॉ का वातावरण ऐसा हो जाता है। बाज औकात अभ्यासी को तबियत का रुझाान परमात्ता की तरफ नहीं होता है और जहॉ दो चार रोज को वह जगह छोड़ी, वहॉ का वातावरण का असर था, खत्म हो जाता है तब एकदम से तबियत का रुझाान फौरन तबदील हो (बदल) जाता है।

3. नियमः— अभ्यासी को कुछ न कुछ कर्म का बन्धन बॉध लेना जरुरी है, क्योकि तबियत अगर नहीं भी लगती है तो बन्धन को जारी रखने में वक्त की पाबन्दी बराबर होती रहती है और उस परमात्ता की दया का इन्तजार स्वाती की बूॅद की तरह लगा रहता है, तब वे दयालु फिर अपनी दया कर ही देते हैं।

4. जबान (जिब्हा) की पवित्रताः— अपनी जबान से किसी की बुराई न होने पावे और बार—बा रनाम का जिक्र होता रहे, ताकि कुछ अरसा में जबान सिवाय ईश्वर के नाम के दूसरी तरफ ध्या नही न दे। जब जबान उसके प्रेम में मग्न होकर नाम गावेगी तो वह खुद (अपने आप) पवित्र हो जावेगी।

5. ऑखों की पवित्रताः— इस ऑखें से सिवाय ईश्वर के ध्यान के और कहीं ध्यान (नजर) न लावे। प्रकृति या मायावी चीजों का रूप अगर ऑखों के सामने आ गया तो बजाय उस रूप को ध्यान में लाने के यह ख्याल हो कि बनाने वाला कितना अच्छा कारीगर है, जिसने इन ऑखों

को लुभाने वाली खूबसूरती (सुन्दरता) को बनाया है। फिर ऑखों के सामने अगर अपने गुरुदेव की पवित्र मूर्ति हर वक्त रहेगी तो दूसरी खूबसूरती स्वयं अच्छी नहीं लगेगी,क्योंकि अगर कोईदूसरी चीज ऑखों को खूबसूरत लगेगी तो गुरुदेव की मूर्ति हट जायेगी। मगर जिनका सच्चा प्रेम अपने गुरुदेव से है वे कभी उसको हटाना नहीं चाहेगे। इस अभ्यास से कुछ समय बाद सिवाए गरु स्वरूप के कुछ बाकी न रहेगा और उसकी बराबर अभ्यास ऑखों को पवित्र बनाकर प्रभु के दर्शन लायक (योग्य) बना देगी।

6. कान की पवित्रताः— कानों से किसी की बुराई सुनने को अच्छा न समझें। कान अगर बुराई सुनने के आदी हो गयी तो प्रभु के नाम का रस उनको न भायेगा, क्योंकि हर इन्द्रिय का झुकाव नीचे की तरफ को जाता हुआ मालूम होता है और इन्द्रियॉ बहुत समय से हमेशा नीचे की तरफ झुकने की आदी हो गयी हैं, इसलिए बुराई सुनना अच्छा मालूम होता है। कानों को ऐसा पवित्र बनाएं कि सिवाय ईश्वर के नाम के दूसरी आवाज का गुजर न होने पावे। बार—बार की मश्क (अभ्यास) से कान फिर ईश्वर के नाम में रस लेने लगेंगे तथा कुछ समय बाद ईश्वर के नाम का श्रवण ही अच्छा लगेगा, दूसरी बातों से खिंचाव हो जावेया और धीरे—धीरे पवित्रता आने लगेगी।

7. हाथों की पवित्रताः— लुफ्त यह है कि हाथ किसी बुरे काम के लिए न उठें। जब उठें भले काम के लिए और उसके नाम पर दान के लिए। इस वक्त इस अभ्यास से वह आयेगा कि बुरे काम के लिए हाथ उठाते हुए कापेंगे और दुःख मानेंगे। जब यह हालत होगी तो उसकी दया हाथों में शामिल होकर उसको पवित्र बना देगी। त बवह हाथ दया,धर्म के प्रभाव से अति पवित्र हो जायेंगे।

8. पैरों की पवित्रताः— जिन्दगी ऐसी बन जाए कि जब भी पैर उठें, नेक कामों (अन्चे कर्मों) के लिए ही उठें। बुराई की तरफ जाते हुए कापें और दुःख मानें। जब भी पैर चलें नेक कामों के लिए ही चलें तथा वहॉ चलने के लिए हमेशा उत्साहित रहें, जहॉ सोहबते यार मिल सकती है। जहॉ राम नाम की चर्चा आन्तरिक अभ्यास के तरीके से खास तौर से हो।

इन सब ऊपर लिखी हुई पवित्रताओं का असर अन्तःकरण पर पड़ेगा और वह जल्द पवित्र बन जावेगा। इन सब से मदद लेते हुए अन्तःकरण को पवित्र बनाने के लिए जाप जबानी, जाप मानसिक और सनतों की संगत करना चाहिए। ये सब आवरणों को शुद्ध अन्तःकरण को चमका देगा और उसके दर्शनों के लिए या उसके आने के लिए तैयारी कर देगा। यह सब पवित्रताएं मिलकर जिस्म को सोना बना देगीं। अब इस खाकी और फानी जिस्म (नश्वर शरीर) से जो किरणें निकलेंगी वे पवित्रता की होंगी और जो उन किरणों के सम्पर्क में आयेगा, वह पवित्र हो जायेगा।

ऊपर की शुद्धता का नाम चरित्र निर्माण कहा जा सकता है। गुरु की सोहबत से, उसकी कृपा के सहारे आन्तरिक अभ्यास करते हुए अपने को रोशन (प्रकाशित) करना होता है। उधर उसकी कृपा, इधर अपनी कोशिशें हर मुमकिन तरीके से जबान, ऑख, कान, हाथ पैरों को पवित्र बनावे। फिर ऐसे गुरु की जिसमें यह शक्ति है कि दूसरों के चक्रों को जहॉ से चाहे जाग्रत कर सके, सोहबत उठावे। अपनी खिदमत(सेवा) से गुरु को रिझाने की कोशिश करे, जिससे गुरु उस अभ्यासी से प्रेम कर सकें। इधर खिदमत, उधर प्रेम दोनों मिलकर अन्तःकरण को और शुद्ध कर देंगे इससे अभ्यासी जल्द दर्शन का अधिकारी बन जावेगा।

————:————

उपदेश

जिसने उसको पहचान लिया वह कम बातचीत करता है– वह शान्ति प्राप्त कर लेता है और आत्मानन्द उसको दूसरी तरफ खिचने नहीं देता।

प्रेमी हर अवस्था में अपने प्रीतम के ही प्रेम में मस्त रहता है। वह खड़ा है तो उसी के सुमिरन ध्यान में और बैठा हो तो उसी के सुमिरन ध्यान में रहता है। ज्ञानी सूरज की तरफ होते हैं। वे सारे विश्व पर चमकते हैं और जगत उनके आत्म ज्ञान से प्रकाशित होता है।

शिष्य को चाहिए कि अपने गुरुदेव के कदम ब कदम रहे। जरा भी इधर उधर न डिगे, एकान्त, कम बोलना, कम खाना, कम सोना अभ्यासी के लिए लाभदायक है।

कोई भिक्षुक अगर दरवाजे पर आवे तो उसको जो मौजूद हो, देवें या मॉजूद न होवे तो न देवें और नरमी से कह दें कि इस वक्त नहीं है। मगर बुरा भला और कुटवचन न बोलें।

अपनी ताकत पर भरोसा न करें और सन्त की सोहबत की हर घड़ी को गनीमत जाने, क्योंकि न मालूम मौत किस वक्त जा आये। यदि किसी से कर्जा लिया है तो उसे मरने से पहले जरूर चुका देना चाहिए।

जब साधक अभ्यास में आगे बढ़ता है तो उसे प्रकाश व सिद्धि शक्तियों का अनुभव होता है, लेकिन उसे इनकी तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए, क्योंकि असल मकसद उसको प्राप्त करना है न कि रास्ते की चीजों को।

जो शख्स परमात्मा से डरता है, वह सही रास्ते पर है। अगर मालिक का खौफ दिल से निकल जावेगा तो गुमराह हो जावेगा।

भूत और भविष्य के ख्यालों में अपने आपको न उलझायें, और हर हाल में राजी रहें। वर्तमान को गनीमत जानकर उससे लाभ उठाना चाहिए।

या तो अपने आपको ऐसा जाहिर करें जैसा कि हो या ऐसा बन जाए जैसा कि जाहिर करता हो।

जो शख्स इस बात का इच्छुक है कि उसे परमात्मा की कृपा का अनुभव होता रहे तो उसको आवश्यक है कि वह सदा सच्चाई पर कायम रहे।

जो ऑख परमात्मा की कारीगरी को न देखे, उसका अन्धा होना बेहतर है, जिसकी जिव्हा उसके सुमिरन में न लगे, उसका गॅूगा होना अच्छा है, जो कान ईश्वरीय गुणगान न सुने, उसका बहरा होना अच्छा है। जो शरीर उसकी सेवा में न लगे, उसका मर जाना अच्छा है।

कोई उपदेश करने के योग्य तब होता है जब उसे अनुभव हो जाए कि यह योग्यता ईश्वर कृपा से ही है।

काम क्रोध और लाभ ही सबसे बड़े बाधक हैं। वे तीनों नरक के द्वारा हैं। कोई किना भी विद्वान, बुद्धिमान, तपस्वी क्यों न हे, यदि काम, क्रोध, लोभ में से एक के भी वश हो जाता है तो उसकी विद्या, बुद्धि,तप का कोई अर्थ नहीं। यह तीनों विकार बुद्धि को मोह में डाल देते हैं और बुद्धि भ्रम से जीव का सर्वनाश हो जाता है।

जब अनेक जन्मों के पुण्यों का उदय होता है और जब जीव के कल्याण का वक्ता आ पहॅुचता है, तभी उसे सच्चे गुरु के दर्शन होते हैं।

गुरुदेव के दिव्य गुणों में जिनका हृदय लग गया, उनको फिर सांसार के सभी विषय फीके लगते हैं। उन्हें वैराग्य जगाने की कोशिश नहीं करनी पड़ती, अपने आप उनका चित्त सभी भोंगों से विरक्त हो जाता है।

जो प्रभु के सच्चे भक्त हैं, उन्हें प्रभु के भक्त प्रभु से भ अधिक प्रिय लगते हैं। किसी भक्त का मिलना उन्हें प्रभु के मिलन जैसा सुखादायी होता है।

साधक को एकान्त में किसी भी पर–स्त्री के साथ कुछ देर भी रहना या उससे बात करना सर्वथा त्याग देना चाहिए। वह स्त्री चाहे कोई भी हो, ओर उससे अपना कोई भी सम्बन्ध क्यों न हो।

पुण्य अपने पापों के लिए पश्चाताप, पाप से घृणा और फिर पाप न करने का निश्चय बड़े बल से ही होता है।

जिसको धन की चाह है वह विद्वान हो पर भी मूढ़ शान्त होने पर भी क्रोधी और बुद्धिमान होने पर भी मूर्ख है। धन के लिए मनुष्य दूसरों से शत्रुता करता है। अनेक पकार के पाप करता है। बल, तेज, यश, विद्या, शूरता, कुलीनता और मान सभी को धन की चाह नष्ट कर देती है। धन का लाभों अपमान और क्लेश की चिन्ता नहीं करता। पाप को

पाप नहीं गिनता, वह अपने हाथों अपने लिए दुःख और नर्क का मार्ग बनाता है।

सदा प्रभु का भजन करें। किसी के दोष न देखें। किसी की चुगली न करें। सदा परोपकार में लगा रहे। मूर्खों का साथ छोड़कर श्री हरि की पूजा में लगा रहे। काम, क्रोध, लोभ, मोह को त्याग कर सभी प्राणियों को अपने समान समझे। न तो कभी किसी से कोई कठोर वचन कहे और न कोई निर्दयता का व्यवहार करे। डाह, परनिन्दा और अहंकार को सावधानी से छोड़ दें। सभी प्राणियों पर दया करें। सतपुरुष की सेवा करें, जो पापी है, उन्हें पाप से छुड़ाने की कोशिश करें, उन्हें धर्म का सच्चा मार्ग बतलाए। आदरपूर्वक अतिथियों की सेवा करें, इससे परम् शान्ति होगी।

जीवन में सद्‌गुरु पर श्रद्धा हो, उन पर पूर्ण विश्वास हो तो बस बेड़ा पार है। सद्‌गुरु के वचन को मानने की इच्छा हो, आज्ञापालन की दृढ़ता हो तो उसके जीवन में कौन सा काम दुर्भल है। सबसे अधिक हितौषी सद्‌गुरु ही हैं, जो शिष्य का अज्ञान दूर करने के लिए चेष्टा करते रहते हैं। गुरु के बराबर दलायु, हितैषी जगत में कौन होगा? जिन्होंने भी कुछ पाया है, गुरु कृपा से ही पाया है।

विषयों का जितना भी सेवन किया जाए, उनसे तृप्ति नहीं होती। विषयों से मन को हटाकर ही प्राणी शान्ति पाता है। सभी लोग अपने ही भाग्य से सुख या दुःख पाते हैं। अतः दूसरों को अपने अमंगल का कारण नहीं मानना चाहिए।

अनन्य भाव से अपने मन को प्रभु में ही लगाकर भजन करें, प्रभु के अलावा दुख दूर करने वाला और कोई नहीं है।

जब कोई प्रभु पर पूरा विश्वास करके उनकी ओर चल पड़ता है, तब वे खुद ही उसकी सारी चिन्ता करते हैं।

सच्चे भक्त अपने स्वामी से उनके प्रेम के अलावा और कुछ नहीं मॉगते। वे स्वर्ग के भोगों को भी नरक समान समझते हैं।

यह संसार एक भयानक वन है। इसमें पग–पग पर दुःख और संकट के कॉटे बिछे हुए हैं। यहॉ भटकने वाले मनुष्यों के लिए सिर्फ प्रभु की भक्ति ही सुखदायी है। मनुष्यों के भारी से भारी पाप भी प्रभु की भक्ति की आग में भस्म हो जाते हैं, तभी शान्ति मिल पाती है। अगर यह शरीर प्राणियों के उपकार में न आये तो इसका पालन पोषण बेकार ही है। इस नाशवान शरीर से नित्य धर्म पालन किया जाए, यही शरीर की सफलता है।

जिसने बड़ों से कभी ईर्ष्या नहीं की, छोटों का कभी अपमान नहीं किया और बराबर वालों से कभी स्पर्धा नहीं की, वही संसार में सर्वश्रेष्ठ है।

मनुष्य शरीर में ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। जो मानव देह पाकर भी ज्ञान नहीं पाता, आत्मा को नहीं जानता, उसका फिर किसी योनि में कल्याण नहीं होता। विषयों में लगने से ही दुःख होता है। अतःबुद्धिमान पुरुष को विषयों से निवृत्त हो जाना चाहिए।

फल के लिए धर्माचरण करने वाले सच्चे साधक नहीं हैं। वे धर्म और उनके फल का लेन–देन करने वाले व्यापारी हैं।

सम्पूर्ण क्लेशों, सभी अनर्थों का नाश तभी होता है, जब बुद्धि भगवान के चरणों में लगे, लेकिन जब तक महापुरुषों की चरण धूल मस्तक पर धारण न की जाए तब तक बुद्धि निर्मल होकर भगवान में लगती नहीं।

प्रभु के प्रेमी भक्तों के क्षण मात्र से सत्संग से स्वर्ग की तुलना नहीं की जा सकती। फिर संसार के तुच्छ भोगों की बात ही क्या है।

सन्तों और भक्तों की सेवा करना, उनके उपदेशों का श्रवण करना, उनके आचरणों का अनुकरण करना, यही सच्चा सुख प्राप्त करने का उपाय है और यही साधक का कर्तब्य है।

धन से अभिमान और स्वार्थ बढ़ा करता है। सत्पुरुषों के पास आए हुए धन का सेवा में ही सदुपयोग हुआ करता है।

जब हम किसी के लिए अपने मन में द्वेष और बैर के विचार रखते हैं, तब वे हमारे विचार रूपी राक्षस उसकी ओर जाते हैं और उसके मन में भी द्वेष और बैर के विचार उत्पन्न करके उनको फिर अपनी ओर खींचते हैं। स्वार्थ, क्रोध, हिंसा, मद और लोभ आदि के विचारों का भी ऐसा ही असर होता है।

अतः किसी के लिए प्रेम के विचारों को उठाया जाए, तो वे भी वहॉ तक पहॅुचते हैं और उसके मन में प्रेम के भाव पैदा करते हैं। इस तरह अगर बार–बार प्रेम के विचारों को बढ़कर भेजा जाए तो आखिर में उसका द्वेष मिल जाता है ओर वह भी प्रेम करने लगता है। भोग का सुख क्षणिक होता है और दुर्गुणों को जन्म देता है, लेकिन त्याग का आनन्द सच्चा आनन्द है। सह हृदय को निर्मल कर देता है। उससे सद्गुण जाग उठते हैं और वह जीव को प्रभु के चरणों में ले जाता है।

प्रतिष्ठा के कारण जितना जल्दी साधक मोह में पड़ता है, उतनी जल्दी पतन दूसरे किसी विघ्न से नहीं होता। इसलिए साधक को सदा प्रतिष्ठा से दूर रहना चाहिए।

धन में सुख होता तो जिन लोगों के पास धन है, उनका जीवन सुखी होना चाहिए था लेकिन वे भी दुःखी ही देखे जाते हैं। दुःख का कारण अज्ञान से पैदा हुआ असन्तोष है, वह मिट जाये तो मनुष्य किसी भी हालत में रहे, हमेशा सुखी रह सकता है।

जब चित्त में भोगों की कामना भरी है तब तक उसका अन्धकार नहीं मिटता और इस अन्धकार के रहते शोक–सन्ताप से कभी छुटकारा नहीं मिल सकता। भोग वासना का नाश सन्तों के संग से ही हो सकता है।

लोभ आते ही, सत्य, दया वगैरह सद्गुण चले जाते हैं। लोभ के साथ असत्य, अन्याय,छल, चोरी, कपट, दम्भ, ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा, बगैरह दुर्गुण रहते हैं।

नाम का स्मरण ही संसार में कल्याण का सर्वश्रेष्ठ साधन है, लेकिन इसकी पात्रता पैदा करने के साधन ये हैं कि सदा सन्तों का संग करें, सांसारिक चर्चा से बचे, परनिन्दा से कोसों दूर रहें, दीन होकर दूसरों का मान करें, किसी का दिल न दुखायें। प्रतिष्ठा को विष्ठा समान समझें, सरल और सच्चरित्र होकर जीवन बितायें।

भगवान की भक्ति करके प्रभु से बदले में धन, पुत्र, प्रतिष्ठाा,जीवन वगैरह जो लोग चाहते हैं, वे भक्ति के महत्व को नहीं जानते। वे संसारी पदार्थों को ही लक्ष्य मानने वाले विषयी लोग हैं। प्रभु को वे इन पदार्थों की प्राप्ति का साधन बनाते हैं, वे विषयों को प्रभु से ऊँचा मान बैठे हैं।

इस संसार का मालिक एक ही है। हिन्दू और मुसलमान उसे अलग–अलग नामों से पुकारते हैं, जिनकी जैसे रुचि होती है वह उसे उसी तरह भजता है।

जो लोग ज्ञानी हैं, जिनकी अविद्या की गांठ खुल गयी है और जो सदा आत्मा में ही रमण करने वाले हैं वे ही प्रभु की निष्काम भक्ति किया करते हैं।

न किसी से कभी कुछ लेना, न बिना मेहनत के खाना, कम से कम जरूरतें रखना और उन्हें अपनी मेहनत से ही पूरी करना, साधक का धर्म है।

जो कर्म, जो विद्या और जो विचार प्रभु की ओर ले जाकर अभिमान से अन्तःरण को दूषित कर देते हैं, वे कुकर्म,अविद्या और कुविचार हैं।

प्रीति का नाश स्वार्थ में होता है। निःस्वार्थ प्रेम ही प्रभु से मिलता है।

प्यास से व्याकुल होकर मनुष्य जल की बूँद के लिए छटपटाता है और एक क्षण की देर भी सहन नहीं कर सकता। वैसी दशा जब भगवान के दर्शन के लिए भक्त की हो जाती है तब भगवान को भी एक क्षण की देरी सहन नहीं होती और वे तुरन्त प्रकट होकर उसे कृतार्थ करते हैं।

संसार की कोई वस्तु मनुष्य के साथ नहीं जाती है। सबकुछ यहीं रह जाता है। यहॉ जो कुछ है वह अपना नहीं है। वह भी प्रभु का दिया हुआ है। इस मनुष्य जीवन को पाकर जो उस परम्पिता प्रभु को याद नहीं करता, उसके जीवन को धिक्कार है। मनुष्य अज्ञानवश विषय भोगों की इच्छा करता है। विषय दुःख रूप है जो विषय भोग चाहता है, वह इस लोक में दुःख भोगता है और परलोक में भी उसे अपने पापों का दण्ड भोगना पड़ता है।

गुरुदेव की सच्ची सेवा उनके बतलाए हुए मार्ग का अनुसरण करने में ही हे।

प्रभु कृपा का अनुभव उन्हीं को होता है जो संसार के भोगों को तुच्छ समझकर केवल उन्हीं से प्रेम करना चाहते हैं।

मनुष्य को अर्थ का धनी न होकर भजन का धनी होना चाहिए तभी गुरुदेव खुश होते हैं और अपना प्रेमदान देते हैं।

साधक का कर्तव्य है अपने गुरुदेव की याद बनाए रखे, प्रेम से, ध्यान से, भजन से सुमिरन व मनन से, अपने ईष्ट की तरफ ख्याल रखे।

गुरु के ऋण से शिष्य का उऋण होना कठिन है। गुरुदेव जो आदेश दें, उन पर चलना ही शिष्य का परम् धर्म है।

जहॉ स्वार्थ होगा, वहॉ सेवा नहीं है, बदला है। यह मन का लगाव है, मन का क्षेत्र है। आत्मा का क्षेत्र अलग है। वहॉ सच्चा प्रेम और हमेशा–हमेशा का आनन्द व शान्ति है, मन से ऊपर उठकर ही सच्ची सेवा बन सकती है।

साधक की नजर अपने ईष्ट की तरफ लगी रहे, किसी और की तरफ नजर न जाए, और किसी तरफ नजर जाती है तो वास्तव में वह उसका है ही नहीं, पथभ्रष्ट है और अभी उसे पूर्ण रूप से विश्वास ही नहीं है। ऐसे साधक को व्यभिचार का दोष लग जाता है। गुरुमत नहीं, मनमत है।

दुःख में भी सुख छुपा रहता है। दुख से याद बनी रहती है। दुख बड़ी नियामत है, जो प्रभु की याद दिलाता रहता है। बुद्ध भगवान ने दूसरों को दुःखी देखकर आत्मा का दर्शन किया। हमेशा उसको धन्यवाद देता रहे। सुख–दुःख दोनों हालतों में शुक्रगुजार रहें, उसकी याद बनाये रखें।

दुःख भक्त को मजबूत बनाने और प्रभु की याद दिलाने के लिए आते हैं। भक्त को दोनों हालतों में उसी का दर्शन करना चाहिए।

जगत की नजर साधक पर बहुत रहती है, इसलिए जगत से बचकर अपना काम करते रहना चाहिए। अपने जीवन में सच्चाई ही सच्चाई हो जानी चाहिए।

गुरु कृपा से साधन करते–करते साधक जब कुछ आगे बढ़ता है तो अहंकार सामने आ जाता है। अपने को गुरु मानने लगता है। भलाई इसी में है कि अपने को सेवक समझता रहे। गुरु केवल ईश्वर है, उसकी याद बनाए रखें। हर क्षण हर दम उससे डरता रहे, कोई गलत काम न होने पाए।

प्रभु के रास्ते में सच्चाई व ईमानदारी से काम लें। चालाकी, बेईमानी दुनिया के लिए छोड़ दें। काम ऐसा करें जिससे किसी के दिल को ठेस न पहुॅचे।

अच्छी कमाई का भोजन, अच्छे ख्याल पैदा करेगा, बुरी कमाई का भोजन बुरे ख्याल पैदा करेगा। वह हमेशा बुराई की तरफ ले जायेगा। जैसा आहार होगा, वैसा ही उसका विचार होगा। इसलिए हक हलाल की कमाई खानी चाहिए।

साधक को तमोगुणी भोजन छोड़ देना चाहिए, सतोगुणी भोजन पर ही निर्भर रहना चाहिए। सतोगुणी के आने पर परमार्थ का दरवाजा खुलता है। जो तमोगुणी आहार करता है, वह परमार्थ से वंचित रह जाता है।

मन हजार बार कसम खाता है कि अब गलत काम नहीं करूॅगा और बार–बार करता है। इस पर सख्ती बरतनी चाहिए। जब मन में दूषित विचार पैदा हो जाते हैं और वातावरण वैसा मिलता है तो दूषित विचार पनपते हैं । इसलिए दृढ़ता से गुरुदेव के आदेशों का पालन करता रहे।

शुरू में साधक को अपने गुरुदेव में पूर्ण रूप से प्रेम पैदा कर लेना चाहिए औरों की तरफ देखना भी गुनाह है। अगर ऐसा करेगा तो गुरुदेव से प्रेम पैदा नहीं कर सकता, उलझन में पड़ जायेगा और दूसरों का भी ध्यान उसका सतायेगा।

ईश्वर प्राप्ति की चाह हर मनुष्य के अन्दर छुपी हुई है। लेकिन हम और चाहों में उलझ जाते हैं ओर जो असली चाह थी, उसे भूल जाते हैं। आत्मा की स्वाभाविक चाह अपने प्रीतम परमात्मा से मिलने की है, परन्तु मन की चाह बीच में आ जाती है।

जिसने जितना दिल को दुनिया की वासनाओं से साफ कर लिया है और परमात्मा के प्रेम का उत्सुक है,उतना ही उसको ज्यादा फायदा महसूस होता है। लिहाजा अभ्यासी को हमेशा हर समय वासनाओं से मन को हटाना चाहिए। जितना वह स्वार्थ को छोड़कर दूसरों की भलाई के

लिए कोशिश करेगा, उतना ही परमात्मा के प्रेम का अधिकारी होगा और उतना ही उसका परमार्थ बनता चलेगा।

जिस्म संसार का है और आत्मा परमात्मा का अंश है। भावनाओं का मण्डल मन है जो दोनों के बीच में है। प्रेम आत्मा का जौहर है। यह प्रेम तब जाग्रत हेता है जब भावनाओं का रुख अन्तर्मुख होता है और सिर्फ तब दब जाता है जब भावनाओं का रुख बर्हिमुख हो जाता है । मन अपने प्रीतम से दूर न हो जाए, यह सावधानी रखनी चाहिए।

गृहस्थ में रहकर भक्ति पूर्ण हो सकती है और संस्कार भोगकर उपरति और शान्ति प्राप्त हो सकती है। दिल से नाम का सुमिरन करते रहना चाहिए। काम–काज के बीच–बीच में भी ध्यान गुरुचरणों में लगाए रखें।

सुरत गुरु चरणों में या बतलाये हुए साधन में लगी रहे तो दुनिया कुछ नहीं बिगाड़ सकती। कमल की तरह पानी में रहते हुए भी भीग नहीं सकते। अभ्यास और ध्यान ठीक तरह से न बन पड़े तो साधक को फिक्र करनी चाहिए। चेष्टा और प्रेम से साधन में लगे रहना चाहिए। बुराई–भलाई की इतनी फिक्र करना चाहिए कि धर्म शास्त्र के खिलाफ जैसे व्यभिचार, चोरी, हिंसा आदि काम न हो। बाकी भलाई, बुराई क्या है, यह गुरुदेव पर छोड़ देना चाहिए। गृहस्थ अच्छा है, क्योंकि सबसे प्रेम और सेवा करने का मौका मिलता है और ताड़ना से मन शुद्ध होता है। दुनिया दुःख की जगह है और दुःख हमें बार–बार यही शिक्षा दुते हैं कि यह दुनिया आराम की जगह नहीं, यहॉ कोई सुखी नहीं है। सन्त कृपा कर इसी से निकालने की कोशिश करते हैं। मगर दुरिया उनका दामन बार–बार छुड़वा देतीहै। यह देवासुर संग्राम है, इसमें खालिस प्रेम ही पार लगवा सकता है। साध कइस प्रेम के लिए बड़े से बड़े दुख झेलने के लिए खुषी से तैयार रहे, तब प्रकृति माता उसे परम् पिता के प्रेम का अधिकारी समझती है।

इस संसार में सब कुछ उलटा नजर आता है। जो कुछ यहॉ दिखाई दे रहा है, वह ढोंग है, स्वप्न है, नाटक है। जो असल है वह प्रेम की डोर है और यह प्रेम दिखायी नहीं देता। सन्त जो प्रेम के भण्डार हैं, उन पर ईमान लाने पर यही असलियत अनुभव हो सकती है। इन्द्रिय

ज्ञान कितना उलटा है, कि जो कुछ भी नहीं है, उसको सब कुछ समझता है और जो सबकुछ है,असल है,उसको ढोंग मानता है।

तीन बातें जरूरी हैं– 1. आचरण, 2. अभ्यास, 3. प्रेम।

इन तीनों को पकड़कर चलना चाहिए। राग–द्वेष से अलग रहना चाहिए। तामसी भोजन और शराब, भॉग, चरस, अफीम बगैरा नशीली चीजों से बचते रहना चाहिए।

सतसंगी को सतसंगी भाई से मिलना चाहिए। आपस में मिलना एक प्रेम पैदा करता है। दुनियादार के साथ सतसंगी को ज्यादा बैठना नहीं चाहिए, वरना नुकसान उठाना पड़ेगा। दुनिया का फायदा भले ही हो जाए, लेकिन परमार्थी का नुकसान बहुत होगा।

जब तक मन शुद्ध नहीं होता, आत्मा का दर्शन नहीं हो सकता। काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार बगैरह भी पड़े रहें और आत्मा के दर्शन हो जायें, यह बड़ा दुर्लभ है। मनुष्य भवजाल से कैसे निकले, इसके लिए सन्त दया करके साधक के अन्तर में प्रेम उभार देते हैं, जिसमें धीरे–धीरे प्रेम बढ़ने लगता है और मन शुद्ध होने लगता है।

साधक को अपना आपा तोड़ना चाहिए कि मैं नहीं हूॅ, गुरुदेव मौजूद हैं ऐसा ख्याल बांधना चाहिए। इससे कर्म नहीं लगेगा। जब आप आपा मौजूद है तब तक कर्मफल भोगना पड़ेगा। ध्यान में रहते हुए प्रेम अंग उठाारे और विरह के पद गाये, जिससे प्रेम पैदा हो।

चिन्ता नहीं करनी चाहिए। चिन्ता छोड़कर उसकी जगह चिन्तन करना चाहिए। चिन्ता छोड़कर खूब मेहनत से अपना काम करें और फल की इच्छा न करें। मालिक की मौज में खुश यानि राजी ब रजा रहें। अगर चिन्ता है तो अभी विश्वास नहीं है और मालिक का भरोसा नहीं है। मालिक पर हर वक्त भरोसा रखें।

प्रभु ने अपने को छुपाकर हमें प्रकट किया है। अब हमें यह करना है कि अपने को छुपाकर प्रभु को प्रकट करें। अपने पिछले कर्मों को भोगकर आगामी कर्मफल से मक्त होकर प्रभु में मिल जायें।

गैर जरूरी वस्तु को त्याग देना त्याग नहीं है। जरूरत होने पर भी वस्तु न मिल रही हो, उसे त्याग समझ लेना भी त्याग नहीं है। बहुत जरूरत होने पर भी अधर्म की वस्तु को न लेना और कष्ट सहन कर लेना त्याग कहलाता है।

सहनशीलता वह गुण है जिससे मनुष्य की परीक्षा होती है। जिसके स्वभाव में सहनशीलता, नम्रता और सेवाभाव है, वही महापुरुष है। सिद्धियॉ, करामातें, उपदेश, व्याख्यान देने वाले महात्मा नहीं होते। जो दूसरों के कटु वचन सुनकर भी खुश रहता है, बेइज्जती होने पर भी शान्त रहता है, जिसके आचार विचार ठीक हैं, वही महात्मा है।

संस्कारों का आना ही मॉ का खेल खिलानाहै फिर जो हमने किया है, वह तो भोगना ही पड़ेगा। रोकर भोगें या हॅसी खुशी से भोगें, सबको भोग भोगना पड़ता है। अवतारों को भी भोग भोगना पड़ा है। वे भी इससे वंचित नहीं रह सके। दुख से घबराना नहीं चाहिए वरन उसका स्वागत करना चाहिए, क्योंकि उससे अपने प्रीतम की याद आती रहती है। विचारों से ही मनुष्य अच्छा बनता है और विचारों से ही बुरा बनता है। जैसे मनुष्य के विचार होंगे, वैसा ही उसका स्वभाव होगा और उसी के मुताबिक उसकी रहनी सहनी होगी।

अच्छे व बुरे विचार संगत से मिलते हैं। जैसे मनुष्य की संगत होगी, वैसे ही उसके विचार होंगे और उसी सांचे में ढलता चला जायेगा। संगत से ही मनुष्य ऊॅचा बनता है और संगत ही मनुष्य को पशु बना डालती है। सदा सत्संग करना चाहिए और कुसंग से हमेशा बचते रहना चाहिए।

अपने परिवार में धीरे–धीरे प्रेम बढ़ाकर सबको अपने जैसे बनाना चाहिए जिससे सत्यमार्ग में बाधा न हो। एक सांस भी खाली न जाए, साधक को अपने गुरुदेव से पूरा प्रेम पैदा करना चाहिए। फिर प्रेम बढ़कर सत्संगियों से प्रेम होना चाहिए और फिर जीव मात्र से विश्वप्रेम होना चाहिए।

गरीब ही प्रभु को पा सकता है, अन्तर में गरीबी होनी चाहिए। धूप काम मारा हुआ मनुष्य ही छाया को देखता है, भूखा मनुष्य ही रोटी की तलाश करता है, चारों ओर से सताया हुआ मनुष्य शान्ति चाहता है। जब सब तरफ से सहारे टूट जाते हैं तभी उसका सहारा मिलता है।

शिष्य का धर्म है कि ध्यान, भजन, सुमिरन करता रहे। गुरुदेव के आदेशों का पालन करें जो वे कहें उसे बिना तर्क के फौरन मान लेना चाहिए। गुरुदेव की बात मानने में ही शिष्य की भलाई है।

————::————

समाधान

सत्संग, अभ्यास और गुरुभक्ति से वेदान्त (ज्ञानमार्ग) के साधन चतुष्टय की चार सीढ़ियॉ –विवेक, वैराग्य, षट सम्पत्ति और मुमुक्षता भी सन्तमत के साधक के लिए सरल हो जाती है। शम (मन की शुद्धि),दम (इन्द्रिय निग्रह) तितिक्षा (बर्दाष्त की ताकत या सहन शक्ति) उपरति (भोग की इच्छा न होना), श्रद्धा और समाधान ये छः प्रकार की आध्यात्मिक सम्पत्ति है, जिन्हें षट सम्पत्ति कहते हैं। जो साधना के लिए सम्बल हैं । मन शुद्ध और बुद्धि निर्मल होने पर गुरु कृपा से बुद्धि तर्क स्वतः शान्त होते हें और सत्यता का अनुभव होने लगता है। फिर भी साधना के सम्बन्ध में अक्सर जो प्रश्न उठते हैं, उनका समाधान नीचे दिया गया हैः–

प्रश्नः– परमार्थ का उद्देश्य क्या है?

उत्तरः– मन को शुद्ध करके, बुद्धि को मिर्लल करके और अहंकार को लय करके आत्मज्ञान, आनन्द, प्रेम व शान्ति का अनुभव करना व इच्छाओं से मुक्त हो जाना और सेवामय जीवन बनाना परमार्थ का उद्देश्य है।

प्र0– वे कौन से साधन हैं जिनकी कमाई करने से सुरत जागकर चेतन मण्डलों में रसाई (प्रवेश) हासिल कर सकती है?

उ0– सत्संग ,सेवा, गुरुप्रेम, सुमिरन, ध्यान, भजन वे साधन हैं जिनमें सुरत चेतन मण्डल में प्रवेश कर सकती है।

प्र0– परमार्थ का उद्देश्य सहूलियत से हासिल करने के शौकीन अभ्यासी को किस किस्म की रहनी–सहनी इख्तियार करनी चाहिए?

उ0– सत्संग, सेवा, गुरुप्रेम, सुमिरन, ध्यान, भजन करते हुए अभ्यासी को अपने आहार, आचार–विचार तथा व्यवहार की शुद्धता रखने से परमार्थ के उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है।

प्र0– रचना के अन्दर वह चेतन मण्डल कहॉ पर स्थित है कि जिसमें प्रवेश करने पर परमार्थ का उद्देश्य प्राप्त हो जाता है?

उ0– चेतन शक्ति जो कि आदि परम्शक्ति है, अपना एक भण्डार रखती है जिसे कुल मालिक का धाम कहते हैं। मन सुरत का औजार है, जिसकी मारफत सुरत अपनी चेतन क्रियायें करती हैं। इससे यह नतीजा निकलता है कि मनुष्य से सूरत की धार के खिंच जाने पर वह बिल्कुल

बेकार हो जाता है। इससे यह नतीजा निकलता है कि मनुष्य का मन भी सुरत के लिए एक वैसा ही परदा है जैसा कि स्थूल शरीर। स्थूल शरीर और मन से ऊपर उठने पर सुरत यानि जीव आत्मा के सब गुण व शक्तियॉ जाग्रत हो उठती हैं। मन का परदा हटने पर खालिस रूहानी खवास यानि निर्मल चेतन अंग प्रकट होते हैं। इन खवास और अंगों की पहुॅच मन से की निस्बत कहीं ज्यादा है। इस हालत में सुरत की हर क्रिया के अन्दर चेतन शक्ति के तीन निज खवास सत्ता चेतनता और आनन्द की कैफियत (अस्वस्थ) पैदा होगी और इसके अन्दर दुःख, क्लेश का नामों निशान नहीं होगा। अब अगर इस दलील को ब्रह्माण्ड पर घटाकर देखा जाये तो नतीजा निकलता है कि सुरत के भण्डार के ऊपर से ब्रह्माण्डी मन का परदा दूर करने पर हमको निर्मल चेतन देश का पता मिलता है जो ब्रह्माण्ड देश के परे स्थित है।

प्र0– संसार में रहने से कभी मन ऊॅचा और कभी नीचा क्यों हो जाता है?

उ0– मन का झुकाव दुनिया की ओर बना रहने से ऐसा होता है। कभी मन ऊॅचा चढ़ जाता है और कभी मन गिर जाता है, कभी बहुत अच्छी भक्ति है और कभी भक्ति की मात्रा घट जाती है। जैसे साधारण मक्खी कभी मिठाई परबैठती है तो कभी विष्ठा यानि गन्दगी पर भी बैठती है। ऐसे ही संसार में रहकर भक्त कभी ईश्वर चिन्तन करता है, कभी उनका स्मरण (सुमिरन) कीर्तन करता है और कभी मन को दुनिया की ओर लगा देता है। जो लोग दुनिया से मन हटाकर केवल ईश्वर को ही स्मरण करते हैं, वे यथार्थ त्यागी हैं। उनको ईश्वर के सिवाय और कोई चीज अच्छी नहीं लगती है। विषय चर्चा होने पर वे वहॉ से उठ जाते हैं। ईश्वरी प्रसंग ही वे केवल ध्यान से सुनते हैं। वे ईश्वर की चर्चा छोड़कर और दूसरी चर्चा करते ही नहीं हैं, जैसे कि मधुमक्खी फूल पर ही बैठती है, मधु पीने के सिवाय और चीज उसे अच्छी ही नही लगती है।

प्र0 –परमात्मा की पूजा क्या है?

उ0– अपने हृदय को दुनियॉ की हर चीज से साफ कर लेना और परमात्मा का प्रेम उसमें भरते रहना परमात्मा की पूजा है। आहिस्ता आहिस्ता सिवाए परमात्मा के नाम के दिल में कुछ बाकी न रहे और उसकी इतना पुख्तगी हो जावे कि वह रोम रोम में समा जावे।

प्र0— दीक्षा का महत्व क्या है?
उ0— गुरु जब शिष्य को दीक्षा देते हैं तब अपनी कुब्बते इरादी (इच्छा शक्ति) से शिष्य का हृदय बिल्कुल साफ कर देते हैं और ईश्वर का प्रेम उसके हृदय में भरकर उसका सिलसिले (गुरुश्रंखला) से जोड़कर ईश्वर के सुपुर्द कर देते हैं। इससे अन्तर में नाम और प्रेम जाग्रत होने के साथ—साथ उसे सन्तों का आशीर्वाद मिलता है जिससे गुप्त रू‪‪ से भी मार्गदर्शन होता रहता है।

प्र0— दुःख का कारण क्या है?
उ0— दुःख का कारण बार—बार दुनिया में जन्म लेना है।

प्र0— किन कारणों से मन अशान्त होता है?
उ0— मन की अशान्ति के तीन खास कारण हैं— राग, द्वेष और भय।
प्र0— राग, द्वेष और भय की जड़ क्या है?
उ0— अपने अलावा दूसरों का भान होना अर्थात द्वेत भाव हेना ही इनकी जड़ है।

प्र0— इस द्वैत भाव का कारण क्या है?
उ0— इसका कारण अज्ञान है या यूँ कहिये कि झूठा ज्ञान है।

प्र0— दुनिया क्या है और आध्यात्मानुभाव का सहज मार्ग क्या है?
उ0— शरीर दुःख, सुख भोगता है, और मन दुःख सुख का अनुभव करता है। आत्मा अलग है। यह शरीर की दुनिया है। बच्चा जब पैदा हुआ, दुनिया तभी से शुरू हो गयी। शरीर खत्म हो गया तो मॉ, बाप, भाई—बहन, स्त्री, लड़का—लड़की आदि स्थूल दुनिया भी खत्म हो गयी। अ बवह जो इस जन्म में संस्कार बनाता रहा, उनको लेकर फिर कहीं पैदा हो जायेगा। मन और आत्मा एक गॉठ में बॅध गये हैं। उस गॉठ की ही बदौलत पैदाइश होती है और संस्कार बनते हैं। अगर दुनिया का ख्याल लेकर मौत आई तो पैदाइश भी ऐसी जगह होगी जहॉ दुनिया का ख्याल जो मरते वक्त खास तौर से था प्रबल रहेगा और वह आखिर वक्त तक अपना काम करता रहेगा। दब भले ही जावे, बिल्कुल खत्म नहीं हो सकता। जिस रोज बिल्कुल खत्म हो गया,मौत हो जावेगी। जिस्म (स्थूल शरीर) नाशवान है। इसकी पैदाइश से दुनिया शुरू हो जाती है, मन पिछले संस्कारों का

बना होता है और जहॉ जहॉ पैदा होता है, अपने पिछले जन्म के संस्कारों के अनुसार आत्मा से शक्ति लेकर जिस्म में काम करता रहता है। अब अगर जिस्म की परवरिश बराबर जैसा मुनासिब हो करता है और मन को किसी दूसरे का समझकर काम करता है, जैसा कि महाराज जनक जी ने योग अभ्यास में ज्ञान सीखने की खारित अपना मन ऋषि अश्टावक्र जी के सुपुर्द कर दिया था तो सिर्फ आत्मा शेष रहती है जो हर चीज से आजाद है। कितना सहज मार्ग है। कुछ सन्तों से बुद्धि को भी मन के साथ–साथ शामिल कर दिया है, यानि मन शुद्ध हो जावे और बुद्धि निर्मल हो जावे तो फिर आत्मा का साक्षात्कार ही साक्षात्कार है।

आफ्ताबे मारफत

1आफ्ताबे 2 मारफत ऐ 3 नुक्ता–दाने मारफत।
4 रहनुमाए 5 सासलिकॉ ऐ 6 जिस्मो–जाने मारफ्त।।
तेरी हर 7तर्जे 8 रहाइश में थी शाने मारफ्त।
हर अदा में था तेरी 9नूरे 10 जहाने मारफ्त।।
हो चुका गो 11 वस्ल फिर भी है समाधी पर वह नूर।
12 जर्रा–जर्रा में है अब भी 13 आनो –बाने मारफत।
हर तरफ देखा जो तूने 14 मतलये 15 जुल्मत मआब।
तूने बदली सरजमीनों आस्माने मारफ्त।।
बनके 16 मूदिक इक सहज से मार्ग की डाली 17 बिना।
इक नई बुनियाद पर रक्खा मकाने मारफ्त।।
18 जुम्बिशे 19 आबरू में थी क्या जाने क्या–क्या 20 आबो–ताब।
जगमगा उठ्ठा था जिससे आस्माने मारफ्त।।
फूक दी वह 21 रूह जिसका 22फैज है अब तक 23 खां।
हर तरफ फूला फला है 24 गुलिस्ताने मारफ्त।।
हर 25 तकल्लुमें थी तेरे प्रेम की 26 मौजें खां।
हर इशारे में खॉ थी 27 दास्ताने मारफ्त।।
28 दीदनी था 29 सब्रो 30 इस्तकलाल का 31 हुस्ने कमाल।
मुझ पे थे सौ जॉ से कुरबॉ 32 खुफ्तागाने मारफत।।
सच हुआ जो कुछ कहा था तूने बर वक्ते 33 बिसाल।
जाग उठेगा खुद ही 34 बख्त 35 खुफ्तागाने मारफ्त।।
मेरे 36 परवानों की खातिर शमअ जल उठ्ठेगी खुद।
खुद व खुद दौड़ेंगे उस पर 37 तालिबाने मारफ्त।।
आज हैं फज्लों करम से तेरे वह रोशन चिराग।
रोशनी पाते हैं जिससे आशिकाने मारफ्त।।
चश्में 38 हक बीं देख ले बिस्मिल निगाहें शौक से।
फूलता फलता है क्सा 39 बोस्ताने मारफ्त।।

1. सूर्य, 2. ब्रह्यज्ञान, 3. भोद जानने वाला, 4. राह बताने वाला, 5. डूबे हुए, 6. शरीर व आत्मा, 7. तरीका/ढंग, 8. रहन–सहन, 9. प्रकाश, 10. संसार, 11. योग,(स्वर्गवास) 12. कण–कण, 13 शान–शौकत, 14 पूर्वी आकाश, 15 तम ग्रसित (ॲधेरा) 16. आविष्कार कर्ता, 17. बुनियाद/नींव, 18. हिलना, 19, माथे पर ऑख का ऊपरी भाग, 20 चमक–दमक, 21. जागृति, 22 लाभ/श्रोत, 23 जारी, 24 बगीचा, 25 बातचीत, 26 हलर, 27 कहानी, 28दर्शनीय, 29 सन्तोष, 30 स्थिरता, 31 परिपूर्ण स्व का सौन्दर्य, 32 शौक रखने वाले, 33 अन्मि समय, 34 भाग्य, 35 सोने वाले, 36 प्रेमी/निछावर होने वाले, 37 इच्छुक, 38 सत्य दृष्टा, 39 बाग।

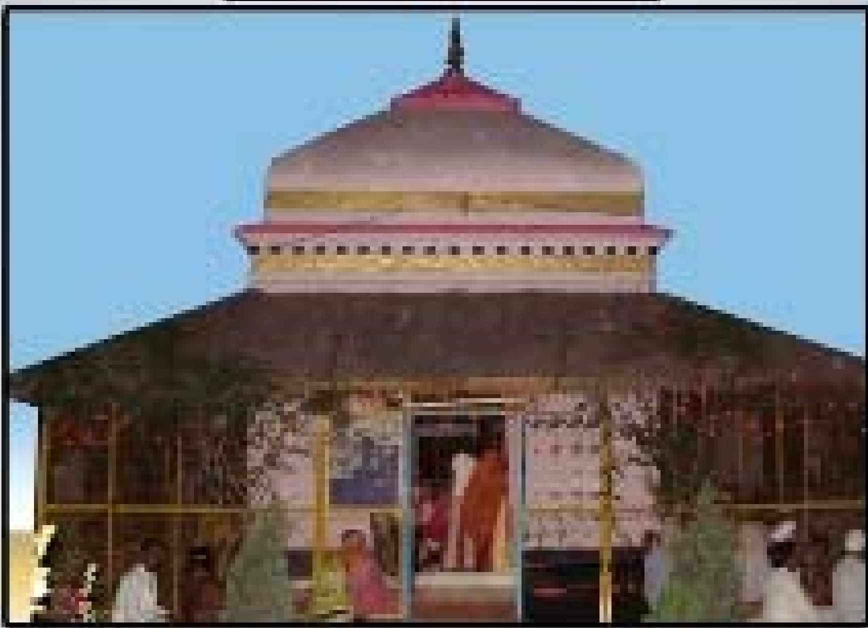

समाधि मन्दिर, फतेहगढ़
महात्मा रामचन्द्र जी महाराज(परम पूज्य लाला जी महाराज)

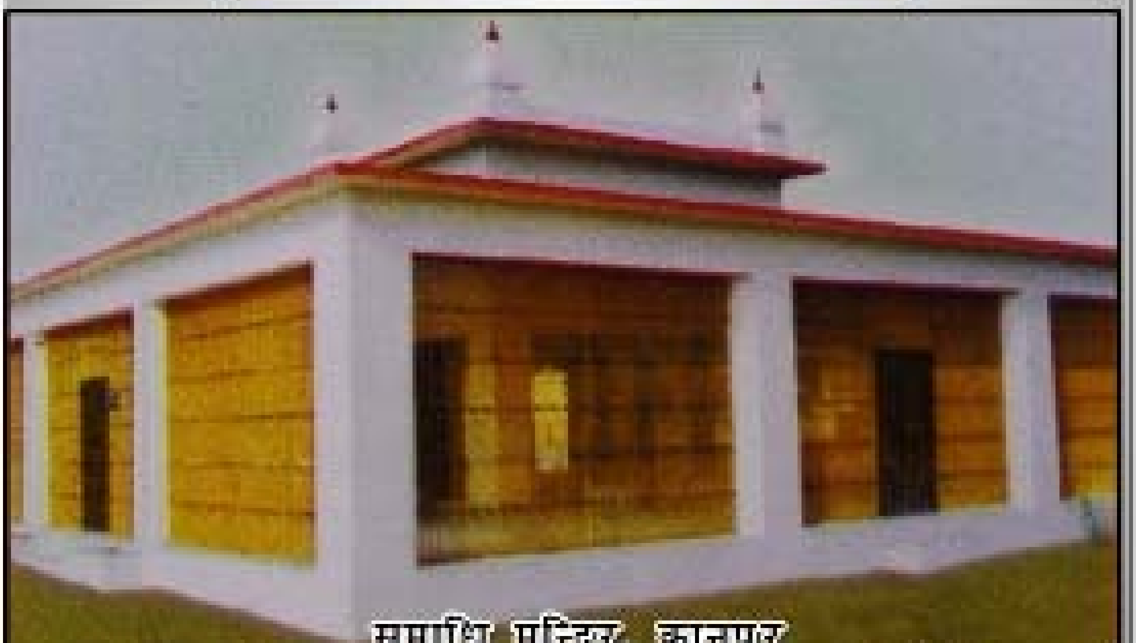

समाधि मन्दिर, कानपुर
महात्मा रघुवर दयाल जी साहब(परम पूज्य चाचा जी महाराज)

परम् सन्त महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

इस युग के महान सन्तों में जिन्होंने निर्बल और संसार में फॅसे जीवों को अपीन मेहर का बल देकर सन्त मत साधना को सरल बनाया और फैजे आम जारी फरमाया, परम् सन्त महात्मा रामचन्द्र जी उर्फ लालाजी महाराज अग्रणीय हैं। ईश्वरीय गुणों से सम्पन्न यह महापुरुष पैदाइशी (जन्म से ही) पूर्ण सन्त थे। आपका जन्म सन् 1873 ई0 में उत्तर प्रदेश के जिला मैनपुरी के भोगॉव स्थान पर हुआ।

वह शुभ दिन जब आपका जन्म हुआ, बसन्त का दिन है और कई सन्त बसन्त के दिन पैदा हुए हैं। यह सन्तों में बहुत मुबारक दिन समझा जाता है। आपका नाम परम् सन्त महात्मा राम चन्द्र जी महाराज था। हम लोग अखलाकन (आदर से) और प्रेमवश लालाजी महाराज कहा करते थे।

आपके वालिद बुजुर्गवार (पिता श्री) का नाम चौधरी हरबख्श राय था। चौधरी हरबख्श्राय साहब फर्रूखाबाद में चुंगी के सुपरिन्टेन्डेन्ट थे। आपके पूर्वज इसी इलाके के बहुत बड़े रईस (धनी) बलिक छोटे से राजा कहलाते थे। मैंने आपका कदीमी (पुराना) मकान कस्बा भोगॉव जिला मैनपुरी में देखा है जिसमें हाथी फाटक से सीधामकान में घुस सकता था। आपके कुछ अरसा तक औला नहीं हुई। आपकी धर्मपत्नी बड़ी ही ईश्वर भक्त थीं तथा रामायण की बड़ी जबरदस्त प्रेमी थीं। कई साल तक औलाद न होने से तबियत कुछ नाखुश रहती थी। हमने उस वख्त माताजी वगैरह से सुना है वह यह कि एक रोज एक मस्त फकीर दरवाजे पर भिक्षा पाने के लिए आया। उस मस्त फकीर ने मछलियॉ खाने की इच्छा जाहिर की। चारों तरफ मछलियां तलाश की गयी। इत्तफाक से दो मछलियां नसवाब शमशाबाद ने चौधरी साहब के लिए, उस रोज भेजी थीं, वह कहीं आपकी नौकरानी को मालूम था और उसने चौधरी साहब की धर्मपत्नी से कहा कि आज नवाब के यहॉ से सुबह ही दो मछलियॉ, चौधरी साहब के लिए आई हैं। अगर आप इजाजत दे ंतो मैं वे दोनों मछलियॉ मज्जूब (मस्त फकीर) साहब के लिए ले आऊॅ। आपने फौरन इजाजत दे दी। नौकरानी पुरानी थी और रइसों की नौकरानियॉ आमतौर से जरा गुफ्तगू (बातचीत) करने में होशियार और मौका (अवसर अनुकूल) की बात करने में कुशल होती थी। मज्जूब साहब को खुश देखकर अर्ज की कि दुआ कीजिए कि हमारे चौधरी साहब के औलाद हो। आपने खुश होकर दुआ दी और एक – दो , एक– दो कहते हुए चले गये। वक्त आने पर आपके दो लड़के श्री लालाजी महाराज (महात्मा राम चन्द्र जी महाराज) और चाचा जी महाराज (महात्मा रघुवर दयाल जी महाराज) पैदा हुए। कोई उनको राम–लक्ष्मण की जोड़ी बतलाता था। लेकिन उनके प्रेम

और अखलाक को जो मैंने देखा है तो मैं बजाते खुद राम–भरत की जोड़ी कहूँगा।

जैसा कि ऊपर जिक्र आया हुआ है, आपकी माता जी रामायण की बड़ी भक्त थीं।

आप फरमाया करते थे कि पहले भक्ति की किरण मेरी परम् भक्त माता ने मेरे कानों में फूँकी और वह अवसर आपको सात साल तक मिला। आप जब सात साल के हुए तो आपकी माता जी का स्वर्गवास हो गया। आपऔर आपके छोटे भाई चाचा जी महाराज (महात्मा रघुवर दयाल जी महाराज) की परिवरिश अकेले चौधरी साहब ने की। वह भी दोनों भाईयों की शादियॉं करके सन 1893 ई0 में परलोक को सिधार गये। आपने अंग्रेजी मिडल पास करके कलेक्टरी फतेहगढ़ में दस रूप्ये माहवार पर नौकरी कर ली। वालिद साहब के स्वर्गवास होने पर दोनों गृहस्थियों का भार आप पर ही रहा।

आप पहले गंज में घुमना–बाजार में एक मकान में रहते थे, जिसे जब कभी हम लोगों को साथ लेकर जाया करते थे,लिखलाया करते थे। इस मकान में जगह कमथी, इसलिए आपने पास में ही मदरसा मुफ्ती साहब मे एक कोठरी अपने पढ़ने और रहने के लिए ले रखी थी । यह कोठरी इस मदरसे से बिल्कुल मिली हुई थी। दूसरी कोठरी में एक बड़े महात्मा रहते थे, जिनका नाम मौलवी फजल अहमद खॉं साहब रहमतुल्लाह अलैहि (उन पर ईश्वर की कृपा हो) था। स्वामी ब्रह्मानन्द साहब जिनकी इस वक्त काफी उम्र थी, मौलवी साहब को फर्रूखाबाद का कुताब (सन्त सिरोमणि) कहा करते थे। आप रहने वाले मौजा उदयपुर थाना कस्बा कायमगंज, जिला फर्रूखाबाद के थे। आप उस कोठरी में मदरसा मुफ्ती साहब में सिलसिला मुलाजमत (सेवा कार्य हेतु) रहते थे। स्वामी ब्रह्मानन्द साहब से आपका अक्सर सतसंग रहा करता था। आप बड़े ही दयालु, उदारचित्त,बेलौस (निःस्वार्थी) व बे तआस्सुब (निष्पक्ष) थे, जिसकी सैकड़ो मिसालें हैं। उदार चित्तता की एक मिसाल इन लफ्जों में बड़ी सहूलियत में समझ में आ सकेगी कि आपने जब लाला जी महाराज को तालीम के लिए फरमाया तो फरमाया कि मेरा मिशन जहॉं तक हो सके भूले–भटके लोगों तक पहुॅंचाओं। जब तक लोगों की आन्तरिक जागृति न होगी, उस वक्त तक अखलाक दुरुस्त (चरित्र निर्माण) न होगा।

आपके पीर हजरत किबला मौलवी अहमद अली खॉं साहब रहमतुल्लाह अलैहि (उन पर ईष्वर की कृपा हो) कायमगंज के मऊ रशीदाबाद में जो

कायमगंज का ही एक मुहल्ला है, रहते थे। आप भी सन्त शिरोमणि थे। ये दोनों बुजुर्ग खानदान नक्शबंदिया मुजद्दिदी मजहरी (चक्रबेधन परम्परा) के थे। यद्यपि सारे खानदानों (अन्य सभी परम्पराओं) से भी आप फैजयाब थे। आप जैसा शिष्य देखते थे, वैसी ही तालीम का तरीका इख्तियार करते थे। कश्फ (अन्तःज्ञान) बहुत ऊँचा था। दीनी और दुनियावी निस्बतों पर कादिर (अधिकार रखते) थे। दो उदाहरण पेश हैः—

एक मर्तबा आपने मौलवी फजल अहमद खॉ साहब और मौलवी अब्दुलगनी साहब से उर्दू मिडिल का या नारमल का इत्महान दिलाया। कुछ परचे खराब हो गये। हजरत किबला मौलवी अहमद अली खॉ साहब से जिक्र आ गया। आपने फरमाया कि तुमने नहीं

पढ़ा और लिखा, तो मैंने तो लिखा है और पढ़ा है। नतीजा आने पर दोनों साहब पास थे। आपकी महानता की शान निराली ही थी।

दूसरी मिसाल जब आप पैसों की तरफ (आर्थिक रूप) से ज्यादा दुखी हुए और दो तीन रोज मय बच्चों के तकलीफ हुई, उस वक्त फिर आपसे जिक्र आ गया, आपने पूछा—फजल अहमद खॉ आपका गुजर कितने रूपये माहवार में हो सकता है। अर्ज (निवेदन) की—कि दस रूपये माहवार में हो सकता है। फरमाया हमने तुमको पहली तारीख से दस रूपये माहवार पर मुलाजिम कर दिया। इस रोज करीब 14 तरीख थी। आपको दिल में ख्याल हुआ कि आज तो 14 तारीख है और ये फरमां रहे हैं कि तुमको पहली तारीख से मुलाजिम कर दिया। यह कैसे मुमकिन है, वापसी में जब आप कायमगंज से रायपुर जा रहे थे तो रास्ते में नवाब साहब शमशाद मिले और फरमाया—मौलवी साहब हमारे दो बच्चों को आप कल से पढ़ा दिया करें। आपने मन्जूर कर लिया। जब पहली तारीक्ष को तरख्वाह मिली, तो पूरे 10 रूपये (पूरे माह की) थी। आपने फरमाया कि मैंने तो फलां तारीख से पढ़ाना शुरू किया है। नवाब साहब नेफरमाया कि आपको पहली तारीक्ष से ही तरख्वाह मिलेगी। आपस आने पर आपने अपने गुरुदेव से जिक्र किया। फरमाया —फजल अहमद खॉ, तुम्हारे जैसे शिष्य को मेरे अलफाजों पर पूरा यकीन (विश्वास) नहीं हुआ। मुसीबत इन्सान को पूरा यकीन लाने से रोकती है।

रायपुर वाले मौलवी साहब की सैकड़ों मिसालें हैं। आपने सैकड़ों भूले—भटके लोगों को परमार्थ का रास्ता दिखाया। लालाजी महाराज के हालात के साथ—साथ आपने दादा पीर (दादा गुरू) और अन्य सन्तों को भूल

न जायें क्योंकि इस सिलसिले की बरकत ही सन्तों की दया पर आधारित है।

जहाँ तक मुझे मालूम है,सन 1891 ई0में महात्मा जी का परिचय अपने गुरुदेव से हुआ। वह इस तरह से कहा जाता है कि आप एक रोज बारिश में फतेहगढ़ से वापिस आते वक्त बहुत भीग गये थे और सर्दी से कांप रहे थे, मौसम भी सर्दी का ही था। जब उस कोठरी की तरफ से निकले तो आपने फरमाया—बरखुददार अगर कुछ मुजाइका न हो और तहामुल (कष्ट) न हो तो यहीं आराम कर लो, मैं अँगीठी तैयार कर रहा हूँ। जिस्म को जरा सेंक लग जावेगा और सर्दी का असर भी दूर हो जावेगा। कहा जाता है कि वे अलफाज (शब्द) आपके जादू भरे थे। आपने अर्ज (निवेदन) किया कि मैं भीगे कपड़े उतारकर अभी आया। कपड़े बदलकर आप वहाँ पहुँचे। इस बीच में आपने अँगीठी खूब गरम कर ली थी। हाथ पैर सेंके। आपने अपने ओढ़ने की रजाई आपको ओढ़ा दी। अक्सर जिक्र आने परआप फरमाया करते थे कि न मालूम मुझको कितना आनन्द उन कपड़ों में मालूम हुआ। गालिबन प्रेम का सौदा उसी वक्त हमेशा के लिए तय हो गया और गायबाना तालीम (गप्त शिक्षा) आपकी चलती रही और बाकायदा दीक्षा सन 1896 ई0 23 जनवरी को 5 बजे शाम कोदी और 11 अक्टूबर सन 1898 ई0 में गुरु पदवी प्रदानकी और दक्षिणा यह माँगी कि जैसे मालिक के नाम पर आपके साथ मालिक की ओर से किया गया है वैसे ही आप भी दुखी और दीन प्राणियों का उपकार और उद्धार निष्काम भव, प्रेम और निःस्वार्थ भाव से किया करें। मखूदम यानि स्वामी बनने की चेष्टा न करें बल्कि जमाने की रफ्तार को देखकर खुद सेवा का भाव रखकर परमात्मा की जानिब से अपने को चपरासी और दरबान समझकर उपकार करें। जमाना नाजुक है और लोगों में इतनी कमजोरियाँ पैदा हो गयी हैं कि संस्कार और इच्छा रखते हुए भी आन्तरिक साधन अपने आप साध नहीं सकते। इन बेचारों को ऐसी सेवा की बड़ी आवश्यकता है। मतलब यह है कि आप खुद आने वालों की सेवा करें। अपनीसेवा करवाने की कोई इच्छा न करें। सारी जिन्दगी आपने इसी आदर्श को लेकर उनके मिशन का काम किया। हम लोग सब बच्चे थे। वे बुजुर्ग कभी अपनी धोती तक हम लोंगों से साफ नहीं करवाते थे। कोशिश यह करते थे कि इतने गहरे कुएँ से पानी भर कर अपने नहाने का इंतजाम खुद करें। जब कभी हम लोग कहा करते थे कि साहब हम लोग यह काम कर देते हैं तो फरमाया करते थे कि मैं कोई मथुरा थोड़े ही हो गया हूँ। गरज यह कि बेगरजानामुहब्बत का बीज और स्वामी न बनने की बीज आपने हम सब में शुरू से ही डाल दिया था।

जब तक आपकी नियुक्ति कायमगंज रही, उस वक्त तक रोजाना बिला नागा कायमगंज से रायपुर जो करीब साढ़े तीन मील है, जाया करते थे। एक रोज बड़े जोर की ऑधी और बारिश आयी और यह मालूम होता था कि तूफान है। आपको जब कुछ नहीं दिखा तो एक पेड़ के नीचे खड़े हो गए। जब तूफान कुछ कम हुआ तो फिर रवाना हुए। लुफ्त यह था कि सब तरफ बारिश थी और ऑधी तूफान भ्था लेकिन आप खुद बिल्कुल सूखे थे, और उस पेड़ के नीचे भी एक बूँद नहीं थी। आपने फरमाया कि तुमको ऑधी तुफान भी हमारे पास आने से न रोक सके। एक मर्तबा आप बहुत बीमार हो गये, मर्ज गठिया था। चल फिर नहीं सकते थे और उठने बैठने से भी मजबूर हो गये थे। जब जरा होशा हुआ तो एक पालकी करके आप वहॉ पहुॅचे। फरमाया बेटे,बहुत तकलीफ उठायी और यह दोहा पढ़ा–

देह धरे का दण्ड है, सब काहू को होय।
ज्ञानी भोगे ज्ञान से, मूरख भोगे रोय।।

एक मर्तबा आप कही गालबन तहसील अलीगढ़ में थे, सोचा करते थे कि जब कोई जरूरत और तकलीफ होगी तो मेरे इतने सतसंगी हैं, मुझे मदद करेंगे। वक्त पर कोई झांका तक नहीं। सोचा कि सिवाय परमात्मा के जो दूसरों की मदद का ख्वाहिश्गार (इच्छुक) हुआ तो नतीजा निकला। अपने गुरूदेव को भी रायपुर लिखा और जलसा के खराब होने की भी शिकायत की। आपने फरमाया कि भाई
जमाना इसी तरह का हो गया है। अगर वे हमारा साथ नहीं देते तो हम ही उनका साथ दें।

आप खुद फरमाया करते थे कि एक मर्तबा जब मैं हाजिर खिदमत हुआ तो आप कुछ पानी से खेल रहे थे और पानी के सारे जिस्म को छींटा दे दे कर जिस्म को तर कर रहे थे। जैसे ही मैंने सलाम पेश की, ख्याल हुआ कि इस वक्त यहॉ रुकना मुनासिब नहीं। मैं वापस हो गया। जब अगले रोज पहुॅचा, बहुत खुश थे और फरमाया, पुत्तूलाल (आपसे हरजत पुत्तूलाल ही कहा करते थे) इतने अरसे में तुमने हमको कभी कोई मौका नाखुश होने का नहीं दिया। उक्त वक्त मैं यही चाहता था कि मेरे पास कोई न आवे और तुम रुख देखकर फौरन वापस हो गये।

आप जबान मुबारिक से फरमाया करते थे कि हमारे सब सतसंगी भाई अक्सर कहा करते थे कि हमको डर लगा रहता था कि हमारे हाथ इस कदर सख्त हैं और गुरुदेव के पैर इतने नाजुक हैं कि कहीं हमारे सख्त हाथों से आपके पैरों को तकलीफ न हो जावे। गुरूदेव के पैर दबाया करते

थे, लेकिन हमारी कभी हिम्मत न पड़ी की आपके पैर दबा दें। अक्सर सतसंग में जिक्र रहा करता था कि एक बुजुर्ग मौजा भोजपुर जो फतेहगढ़ से नजदीक ही है, आपसे बड़े ही तपाक से मिला करते थे, लेकिन उनकी आदत थी कि जो दूसरों के पास परमार्थ की कमाई होती थी, उसको खींच लेते थे तथा बगलगीर होने (आलिंगन करने की) बहुत कोशिश करते थे। चुनांचे जब आप अपने गुरुदेव के यहॉ जा रहे थे, बड़े तपाक से बगलगीर हुए। वह अपने घर चले गये और ये अपने गुरुदेव के यहां चले गये ।इन बुजुर्ग के जोर से सीने में दर्द हुआ कि कई रोज तक सबका इलाज हुआ, लेकिन कुछ फायदा न हुआ, तो मजबूरन इन्होनें सबसे खोलकर फरमाया कि आपके साहबजादे मुशी रामचन्द्र फतेहगढ़ वालों ने मेरा सबकुछ छीन लिया और मेरे बहुत दर्द है। आपने फरमाया कि वह तो बड़ी खलीक (सज्जन) लड़का है। ऐसी हरकत उनसे मुमकिन नहीं। कुछ धोखा हुआ होगा। इत्तफाक से इतनी देर में लालाजी महाराज पहुॅच गये। आपने कहा कि यह साहब ऐसा कहते हैं। लालाजी महाराज ने जवाब दिया कि मैं तो कुछ जानता ही नहीं हॅू कि कैसे दूसरों की परमार्थी विद्या खींचते हैं। तब हजरत ने फरमाया कि जनबा ने ही खुद यह कोशिश की कि इनकी कुछ आध्यात्म विद्या छीन लें,लेकिन हो गया उल्टा। जाइये आईन्दा ऐसा न कीजिए।

यह एक विद्या है जो अक्सर कुछ फकीर दूसरों को नुकसान पहुॅचाने के लिए ऐसा करते हैं। अगर शिष्य अपने गुरुदेव में पूरी तरह से लय नहीं है तो थोड़ी देर के लिए नुकसान पहुॅच सकता है। भाईयों को हर तरह से दूसरे लोगों से मिलने में सावधानी बरतने की जरूरत है। एक परमहंस बिहार की तरफ बड़े ही अच्छे बुजुर्ग गुजरे हैं। आपके भी वृन्दावन की यात्रा में ऐसे ही दूसरे एक फकीर से थोड़ी तकलीफ पहुॅची थी। उन्होंने भी लिखा है कि हर शख्स से सीना से सीना मिलाकर अभ्यासी को कभी नहीं मिलना चाहिए।

एक मर्तबा पहले भी यह बुजुर्ग मौलवी साहब को फर्रूखाबाद स्टेशन पर मिले। कहा हुक्का पी लीजिए। फिर अगले स्टेशन पर गाड़ी पहुॅचने से पहले प्लेटफार्म पर पहुॅचे और हुक्का पेश किया। दो तीन मर्तबा तो आप न बोले, चौथी मर्तबा उनसे बोले कि अच्छा अब अगले स्टेशन पर आप न पहुॅच सकेंगे। सुना है कि उनको हवा में उड़ने की महारत थी। वे आपको यह दिखलाना चाहते थे कि हम ऐसा कर सकते हैं। अक्सर बुजुर्ग ताकत रखते हैं लेकिन दूसरों को दिखलाना नहीं चाहते हैं। कुछ इसका गलत इस्तेमाल कर जाते हैं। अगर पीर (गुरू) में कामिल फनाइयत (पूर्ण लय) नहीं है, यानि यदि शिष्य अपने गुरु में पूरे रूप से लय नहीं है तो धोखा होना मुमकिन है।

एक मर्तबा आप लालाजी महाराज के साथ रायपुर से कायमगंज जा रहे थे। रास्ते में एक औरत मिली जो बिल्कुल नंगी थी और चारों तरफ उसके हुजूम (भीड़) थी। उसको नंगा देखकर लोग परेशान थे। कुछ देर आप खामोश रहे। बाद को कुछ पढ़ा तो बड़े जोर से आवाज आई, मुझे जलाइयें नहीं–अभी इस औरत को छोड़ता हॅू। ख्याल ऐसा है कि कोई गलत रूह इस औरत को परेशान करती थी। दो एक मर्तबा जिक्र आया कि एक सुनार साहब थे, वे बिल्कुल ही नास्तिक थे। परमात्मा की हस्ती के बिल्कुल कायल नहीं थे। जब सुनार साहब का आखिरी वक्त आया ते कुछ दुविधा में पड़ गये और मौलवी साहब को बुलाया। कहने लगे मौलवी साहब मैं परमात्मा की हस्ती का कायल नहीं था, कही इस वजह से तो मुझे ये तकलीफ नहीं है। फरमाया–भाई इन चीजों की बहस का वक्त नहीं है। जो ख्याल बॉध रखा है,वही ठीक है। आपअपनी हिम्मत आली (इच्छा शक्ति) से उसकी तरफ मुखातिब हुए और काम पूरा हुआ।

अक्सर जिक्र आया करताथा कि एक मज्जूब बुजुर्ग (मस्त फकीर) फर्रूखाबाद में रहा करते थे। एक मर्तबा जब कायमगंज वाले मौलवी मुन्शी अहमद अली खॉ साहब मौजूद थे तो आपका गुजर उधर से हुआ। आपने उन मज्जूब बुजुर्ग को, जो उच्च कोटि के महात्मा थे, कुछ छेड़ दिया। आप फरमाते थे कि यह हालत थी कि जैसे कोई चक्की की तरह मेरे सीने को दल रहा है, तब मैंने फौरन अपने पीर (गुरु) को याद किया त बवह बुजुर्ग फरमाने लगे कि तुम्हारे गुरुदेव बीच में मदद को न आते तो मैं तुम्हें इस गुस्ताखी का मजा चखाता। यह घर वापिस चले गये। जैसे ही अपने गुरुदेव के सामने आये तो आपने फरमाया कि भाई दूसरे बुजुर्गों से छेड़खानी मुनासिब नहीं।

लालाजी महाराज ने भी लिखा है और अक्सर कहा करते थे कि अपने यहॉ के बुजुर्गों का कश्फ (अन्तःज्ञान) बहुत जबरदस्त है और उदाहरण दिया करते थे कि एक मर्तबा आप किसी साहब के यहां गये ओर फरमाया कि इस जगह पर बैठकर फलां साहब अभ्यास किया करते थे और यहॉ फलां साहब। जब आपका वक्त वापस अपने निज धाम जाने का हुआ तो सबको इकट्‌ठा करके कहा कि रंज और अफसोस (शोक करने) की जरूरत नहीं है। मैं इस जिस्म की कैद से आजाद होकर तुम्हारी मदद इससे भी ज्यादा कर सकूंगा और आखिरी सांस तक सबको फैजयाब किया। आपकी रूह पाक आज तक सबको मदद करती है। जिसका अहसास (अनुभव) अक्सर सिलसिले के साहेबान महसूस करते हैं और करते रहेंगे।

जब तक गुरु में पूरी लय अवस्था नहीं होती है, तब तक परमार्थी की इतनी अच्छी तरक्की (उन्नति) नहीं होती है। पीर में लय होने से परमार्थ की तरक्की अच्छी होती है और साथ ही दुनिया की मुसीबतें भी सहूलियत से कट जाती है। आसानी से कोई गलत ख्याल का आदमी आपको कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता है और न आपकी तरफ बुरी निगाह डाल सकता है। आपके गुरुदेव हर वक्त सहायता करते हैं तथा उनके ऊपर के बुजुर्ग उनके साथ हर वक्त साया की तरह आपकी रक्षा करते हैं । इस भेद को वे लोग ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे जो इस अवस्था से पार हो चुके हैं।

लालाजी महाराज फरमाया करते थे कि मैंने मुकम्मिल फनाईयत यानि लय अवस्था गुरुदेव से सिर्फ 24 घण्टे में हासिल की और वाक्या यह फरमाया कि वह जमाना जब आपकी शादी हुई, ऐसा था कि नर्तकियॉ बारात में जाया करती थीं और नौशा यादि दूल्हा बीच में बैठायाजाता था और नर्तकियॉ नाचा करती थीं तथा दूल्हे की तरफ बार–बार मुखातिब होती थीं। आप मजबूरन बा–हुकुम अपने वालिद साहब (पिता जी की आज्ञानुसार) महफिल में बैठ गये, लेकिन ख्याल हरक्षण अपने गुरुदेव का था। नतीजा यह हुआ कि 24 घण्टे लगातार गुरुदेव का ख्याल करते रहे और गुरुदेव में लय अवस्था को प्राप्त किया।

एक और वाक्या शुरू में ही गुजरा। जब आप अपने गुरुदेव के चरणों में हाजिर हुए तो एक दिन पिकनिक के लिए सब लोग जो आपके दफ्तर के साथी थे, घटियाघाट पर गये। वहॉ सबने भॉग पी ली। आपके खास मित्र पंडित मातादीन थे, उनका भांग घोटने में विशेष हाथ था, सबने भॉग पी और आपसे भी अनुरोध किया कि भॉग पी लें। आपने मना कर दिया, लेकिन सबने मिलकर जबरदस्ती भॉग मुह में डालना चाहते थे कि आपकी शक्ल बिल्कुल आपके गुरुदेव की हो गयी । तब पंडित मातादीन ने यह महसूस किया कि ये कोई और साहब हैं। वे फौरन घबराकर उतर गये और यह घटना सब साथियों को सुनाई। वे लोग भी घबनाये और सबने आपको भॉग पिलाने से खामोशी इख्तियार कर ली। इस घटना का जिक्र स्वामी ब्रम्हानन्द जी से भी आया। मिश्र पंडित मातादीन भी आपके साथी और सतसंगी बने।

लालाजी महाराज ने अपना मिशन फतेहगढ़ में सन 1910 ई0 में जब प्लेग था और आप राजा साहब तिर्वा की कोठी में थे, उस वक्त से प्रारम्भ कर दिया था लेकिन जो खास शुरूआत हुई, वह सन 1915 ई0 में शुरू साल में ही हुई। पंडित प्यारे लाल साहब और पंडित माता चरण साहब ही पहले लोग थे। परमात्मा उन दोनों हमारे भाईयों की आत्मा को हर तरह से

शान्ति दे, बड़े ही प्रेमी और त्याग करने वाले लोग थे। तीन चार माह के अन्दर ही हमस ब लोग आ जा निकले और एक प्रेम की वर्षा हर तरह से होने लगी। जिन्होंने वह वक्त देखा है, वे लोग अक्सर यह पढ़कर सब्र कर लेते हैं कि जो देखा वह ख्वाब था, जो सुना वह अफसाना था। आपकी तालीम का सारांश प्रेम और सेवा था। तीन चार माह बाद ही सबको ऐसे प्रेम के सूत्र में बॉध लिया कि एक आदमी भी वहॉ से फिर नहीं हटा। जब हम लोग छोटे–छोटे थे तो वहां से कुछ फासले पर पतंगों का मेला लगता था। आप हम सबको साथ लाते और कहते कि चलो तुमको मेला दिखला लावें। जब वहॉ जाते तो दो–दो पैसे अपने पास से सबको मेले में कुछ खाने पीने के लिए देते। यह प्रेम था और जीवनभर यही प्रेम सबके साथ निभाया।

किसी को जरा सी तकलीफ हो जाती तो हर तरह से खाने व दवा का सब इन्तजाम खुद अपने खर्चे से करते और दूसों की तकलीफ को अपनी तकलीफ जाती (निजी) समझतेथे। एक मर्तबा बाबू प्रभु दयाल साहब पेशकार को दिल का दौरा पड़ा। मैं आया हुआ था, कहने लगे जल्दी चलो, उनका मुनासिब इन्तजाम करना है। जब पहुँचे तो तकलीफ ज्यादा थी। कहने लगे तुम यही इनके पास ठहरकर देखभाल करते रहो। मैं दूसरे डाक्टर को बुलाकर लाता हूँ। वे पुराने आदमी हैं और उनके मिजात से वाकिफ हैं, जब तक पेशकार साहब की हालत बिल्कुल ठीक नहीं हो गयी उस वक्त तक आप वहॉ से उठे नहीं। आप कहा करते थे कि अगर तुम्हारे पास शाम को रूप्ये हैं और तुम्हारे दोस्त को जरूरत है और तुमको जरूरत उस रूपये की सुबह को है तो ईश्वर पर भरोसा करके उसको दे दो। तुमको ईश्वर सबेरे बहुत देगा। दोस्त का काम उस वक्त निकाल दो। आए दिन कुछ न कुछ ऐसी अद्‌भुत बातें हुआ करती थीं कि हर शख्स मानूस हो गया।

बहनों में से एक बहन की शारी थी। हमस ब लोग मुन्तजिम (प्रबन्धक) थे। ख्याल हुआ कि खाने का सामान कुछ कम पड़ जाएगा। फरमाया कि सब खाने पर चादरें डाल दो, और ईश्वर का नाम लेकर खिलाते जाओ। सब घर के और बारात के लोग खाना खा गये, लेकिन काफी सामान फिर भी बच गया।

अगर दो तीन प्रेमी भाई एक जगह पर होते, और कोई एक अपनी खैरियत (कुशलता) का खत आपको लिखता और दूसरे का हाल नहीं लिखता तो महसूस करते थे कि एक जगह होकर भी दूसरे का हाल नहीं लिखते, यह क्या मोहब्बत है।

सन् 1919ई0 तक सत्संग बहुत जोर पकड़ गया था। इस बीच में शाम को खासतौर से हर रोज सत्संग चलता था। उधर चाचा जी महाराज अलीगढ़ से आ जाते और वे सारी रात बैठे रहते थे। तालीम का भार ज्यादातर आपने अपने ऊपर ही रखा। बथ्लक चाचा जी महाराज से कहा करते थे कि नन्हें (चाचा जी महाराज का घर का नाम नन्हें था) ये दस बीस आदमी मैंने अपने प्रेम से पाले हैं, कहीं तुम्हारी तपस्या और रियाजत देखकर भाग न जायें। एक दफा भोगॉव में उर्स (भण्डारा) था और वे अभ्यासी मोजूद थे कि जिनको देखकर मैं दंग रह गया। सुबह चारबजे से जो उन्होंनं जिस आसन को लिया उस आसन को दो बजे दिन तक बदला ही नहीं। आपने उसमें अवतार के विषय में समझाया तो वे लोग हक्के–बक्के से रह गये और कहा कि अगर कोई इस तरह से समझाए तो कोई मतभे ही नहीं हो सकता। यह आपने एक छोटी सी किताब में लिखा है। हो सकता है कि आपकी पुस्तकों में कहीं मिल जावे। भोगांव वाले मौलवी साहब से जब सब लोगों ने मिलकर यह कहा तो आप फरमाने लगे कि न मालूम हमारे भाई साहब (गुरूदेव) ने महात्मा जी में क्या भर दिया है जिसकी थाह आज तक नहीं मिली।

आपके कश्क (अन्तःज्ञान) का भी यही हाल था। एक बार में दिलदारनगर जिला गाजीपुर में था, मुझसे कहा कि मैं दो तीन रोज के लिए तुम्हारे पास आऊॅगा। इत्तफाकन जो तारीख मुकर्रर (निश्चित) थी, उस पर आप नहीं पहुॅचे। मैं समझा कि शायद प्रोग्राम बदल दिया होगा। तीसरे रोज आप तशरीफ ले जाए और मकान पर आवाज दी। मैंने पूछा मेरा मकान बिल्कुल जंगल में है और रात के तीन बजे हैं आपको बड़ी दिक्कत हुई होगी। फरमाया मैं सीधे तुम्हारे ही घर आया हूॅ और इसी दरवाजे पर आवाज दी है, मालूम होता है कि मैं यहॉ पर कई बार आया हूॅ। दूसरी मर्तबा फिर जब मैं लखनऊ में था और बहुत बीमार था तो भी आपने यही फरमाया कि हम सीधे इसी मकान पर आए हैं।

अक्सर आप फर्माया करते थे कि मैं 24 घण्टे में एक दो मर्तबा अपने सब प्रेमियों के यहॉ घूम लेता हूॅ। जैसे उनके गुरूदेव साया की तरह साथ–साथ रहते थे ऐसे ही आप भी साया की तरह अपने प्रेमियों की देखभाल करते थे। एक मर्तबा भाई साहब डा0 कृष्ण लाल साहब सिकन्द्राबाद से चले और शिकोहाबाद आते–आते हैजे से सख्त बीमार हो गये। तब अस्पताल में कर्मचारियों ने दाखिल कर दिया। सुबह जब वहॉ पहुॅचे तो पूछा कि अब तबियत कैसी है, कहा कि काफी बेहतर है। सुबह के

वक्त जब कोई आपसे बात करना चाहता था तो आप टाल देना चाहते थे। जब भाई साहब वहॉ पहुॅचे, मैंने सब हाल पूछा। उक्त वक्त मैंने ही उनसे कहा कि आज सुबह से ही लालाजी महाराज कुछ परेशान से थे। मालूम होता है कि यह सब आपकी बीमारी की वजह थी।

आपको शराब और जुए से बहुत नफरत थी। एक मर्तबा दिवाली के रोज अपने भाईयों में से किसी साहब के यहॉ से बुलावा आया। आप चले गये। वहॉ पहुॅचने पर देखा कि अपने सत्संगी भाई भी रिश्तेदारों की वजह से जुआ में शामिल थे। सुबह जब मैं आपके पास गया, तो मुॅह ढके लेटे थे। माताजी से पता चला कि रात से बहुत सुस्त और रंजीदा (दुखी) हैं कि हमारी सोहबत का कोई अच्छा असर इन साहबान पर नहीं पड़ाऔर उनकी यह सोसायटी झूटी है। जब इन साहब को पता चला तो उसके बाद फिर कभी जुआ नहीं खेला।

आप विधवा विवाह के बहुत पक्ष में थे एक सज्जन ने जो सत्संगी न पहले थे और न अब ही हैं, यह ख्वाहिश जाहिर की और साथ हीयह भी कहा कि हमारे रिश्तेदार चुपचाप भले ही शामिल हो जायें, तो आपने अपने मकान के कम्पाउन्ड में ही वह शादी खुद शामिल होकर कर दी। वे दोनों ही प्राणी बहुत खुश हैं और बाल बच्चेदार हैं।

आपकी और मिसालों के साथ एक खास मिसाल है जो हम लोंगों के सामने गुजरी। एक लड़का जिसका नाम मुन्ना था, जिसको आप हर दिल अजीज कहा करते थे, सख्त बीमार हुआ। हम तीन चार डाक्टर जो आए हुए थे, फर्रूखाबाद में उसको देखने गये पूछा तुम्हारी इतनी आमदनी नहीं है,दवा का खर्च किस तरह से चल रहा है और रूपये भी देने चाले। मुन्ना ने रूप्ये नहीं लिए और कहा भाई साहब लाला जी महाराज कल इलाज के लिए 50 रूपये दे गये हैं। घर आने पर पता चला कि बड़ी कठिनायी से अपने ही पास से उस रूपये का इन्तजाम किया था। हमारे एक सहपाठी थे और हम दोनों साथ–साथ पूजा करने आपके पास जाया करते थे। एक रोज वह और मैं दोनों जब शाम को जा रहे थे तब मैं आपके पास सीधा चला गया। वह अपने रिश्तेदार के यहॉ चले गये और जल्द वापस आने को कह गये गये थे। थोड़ी देर में जब वह आए और पूजा में बैठे तो बुरे ख्यालात आ रहे थे और पूजा में तबियत नहीं लगी और शिकायत की कि आज बिल्कुल पूजा में तबियत नहीं लगी। थोड़ी देर बाद जब हम चलने को हुए तब पूछा अब क्याहाल है, कहा कि अब तो तबियत खूब लग रही है। चलते वक्त कहने लगे कि हर जगह का खाना मुनासिब नहीं है। रास्ते में मैने पूछा कि क्या

बात थी। तब मालूम हुआ कि उनकी एक नौकरानी कहीं भद्दा खाना ले आई थी और वही उनको खाने को दिया था। यह कश्क की हालत थी। सामने आते ही यह समझ लिया कि खाना खराब खया था। एक मर्तबा मैं कई मील पैदल चलकर जून की धूप में आया। रास्ते में खून के दस्त हो निकले। बड़ा कमजोर था। इस कदर खून के दस्त हुए कि सारे कपड़े अपवित्र थे। मैंने सोचा कि इन नापाक कपड़ों से आपके सामने नहीं जाऊँगा। खूब नहाया और फिर आहिस्ता –आहिस्ता चला। जैसे ही पैर छुए पूछा कि इस सख्त धूप में कैसे आये। पैरे छूते ही मालूम हुआ कि नामालूम मुझको कितनी ताकत आ गयी और सब तकलीफ दूर हो गयी। उस प्रेम को अब सिर्फ कह कर सब्र कर लेते हैं– ढूँढ़ने से अब नहीं मिलता। आपका प्रेम और चाचा जी महाराज की बख्शीश दोनों पुराने भाईयों के दिमागों से नहीं निकल सकती है। वह जमाना ही आजीबथा। खुद लालाजी महाराज फरमाया करते थे कि मेरी यह छोटी सी जमात परमार्थ में बड़ी से बड़ी जमात का मुकाबला कर सकती है।

मैं काफी घूमा और सन्त महात्मा भी बहुत मिले जो गद्दी नशीन थे, इन लोगों को यही कहते बना कि आप लोग हीरा लिए बैठे हैं और खामोश हैं– जो कुछ नहीं जानते वे यहॉ ढोल बजाने आते हैं। आप कहा करते थे कि यहॉ का तीन दिन का बैठा हुआ शख्स दूसरे का कलब जाकिर (हृदय चक्र जागृत) कर सकता है। हम लोग रात दि नही ऐसा देखते हैं। वाचक ज्ञानी होना और चीज है, वास्तविकता और चीज है। आपको भरोसा अपने बुजुर्गों पर इतना जबरदस्त था कि जब लड़कियॉ शादी के योग्य हुईं तो कहा करते थे कि मैं तो वर ढूँढ़ ही रहा हूँ, मुझसे ज्यादा फिक्र मेरे बुजुर्गों को है।

जब सत्संगियों की तादात बढ़ने लगी तो आपने फरमाया कि ऐसी छुट्टी रखों कि जिसमें सब लोग इकट्ठे हो जाया करें। तब उस वक्त के लिहाज से ईस्टर की चार रोज की छुट्टी सबसे बेहतर समझी गयी। चुनांचे सन् 1921 ई0 में यह तय करके उसी साल यह भण्डारा शुरू कर दिया।

सन् 1921में चाचा जी महाराज बहुत सख्त बीमार हो गये थे और बचने की कोई उम्मीद नजर नहीं आती थी। फिर चाचा जी महाराज से पूछा कि तुम किसका इलाज चाहते हो, और किसी पर तुम्हारा विश्वास है। तब फौरन ही आपने उन्हीं वैद्यका जिनपर चाचा जी का ख्याल था, इलाज शुरू कराया। जो हम लोग उस वक्त थे, उन्हें यही पता चला कि आपने अपनी उम्र का कुछ हिस्सा आपको (चाचाजी महाराज) दे दिया। चाचा जी महाराज

ने मुझसे हमेशा यही कहा कि हम पहले वापस जायेंगे, लेकिनजब लालाजी महाराज की वापसी उनसे पहले हुई तो मैंने पूछा कि यह क्यों। तो भी यही जिक्र आया कि लालाजी महाराज ने सन् 1921 ई0 में सख्त बीमारी की हालत में अपनी उम्र का कुछ हिस्सा उनको प्रदान कर दिया था।

हमारे एक दोस्त ने चिट्ठी में लिखा कि आपकी चिट्ठी बहुत दिनों से नहीं आई,मालूम होता है कि आप मुझसे नाखुश हैं। कितना प्रेम भरा जवाब आपने दिया है। जो आपके पत्रों में दर्ज है और आखिर में लिखा हैः–

''मैं हूँ आपकी ऑखों का देखने वाला।''यह आपका प्रेम था।

आपका गाना निहायत सुरीला था और फर्माया करते थे कि मेरा रूहानी है इसलिए इतना रस है। यहॉ तक शोहरत (प्रसिद्धि) हुई कि एक नाटक कम्पनी ने आपको 200 रूपया माहवार उस जमाने में देना चाहा जो आपे इन्कार कर दिया। अलबत्ता परमार्थ के लिए हमेशा ही तैयार रहते थे। एक मर्तबा एक कलेक्टर ने जिनकी मातहती में आप खुद काम करते थे, आपको बुलाया। वे परमार्थी ख्याल के थे, इसलिए आप वहॉ चले गये। दूसरी मर्तबा बुलाया फिर चले गये। तीसरे मर्तबा जब चपरासी बुलाने आया तो हम सब लोग बैठे थे, चपरासी से कहा कि मैं कोई गवैया नहीं हे।। मैं तो इस ख्याल से चला जाता था कि वे परमार्थी ख्याल के हैं, वरन मैं कोई रोज महफिल की हाजिरी थोड़े ही देता हूँ। शुरू में आपका यह बहुत प्यारा गीत था।

''जिन्हें ढूॅढ़ा था मैने आसमानों में जमीनों में,
वे निकले मेरे जुलमत खाना दिल के यकीनों में।''

इसको खुद भी कहा करते थे और चाचा जी महाराज से भी सुना करते थे। उसके बाद कुछ दिनों यह बहुत रही।

''उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहॉ जो सोवत है।''

आखिरी भण्डारे में आप यह बहुत पढ़ा करते थे–

''वादये वस्ल चूॅ सबद नजदीक
आतशे शोक तेज तरगरदद।।''

अर्थात– ज्यो ज्यों प्रीतम से मिलने की घड़ी नजदीक आ रही है, प्रेम की आग तेजी से बढ़ती जा रही है।

जब आप बीमार हुए तो आखिर में सब प्रेमी भाईयों से मिल आए। सिकन्द्राराबाद से शुरू किया, फिर बुलन्दशहर, एटा, एक बार में और दूसरी बार में कानपुर वगैरह। जब बुलन्दशहर से कार में बैठकर रवाना हुए तो गैर

मामूली तरीका से रोये और गले मिले। मुझे उसी वक्त ही ख्याल हुआ कि दुबारा वापसी नहीं है। कहने लगे कुछ दिनों नवदिया हमारा ख्याल रहने का है। अगर एक नौकर और दूध का इन्तजाम हो जाए तो खुली हवा हमें ज्यादा आराम देगी। मैंने कहा कि जल्दी ही दोनों इन्तजाम कर दिया जायेगा। सो नवदयाही में आप बस गये। जहॉ आपकी समाधि आज मौजूद है– वह नवदया ही है।

आप एक भाई का भेद दूसरे से कभी जिक्र नहीं करते थे। मेरी भाई साहब से इतनी दोस्ती थी और इसको वे भी खूब जानते थे, लेकिन फिर भी कभी मेरा भेद भाई साहब से और उनका भेद मुझसे नहीं कहा। हालांकि हम दोनों आपसे मे खुद सब बातें कर लेते थे। यह अखलाक था। आपका जीवन ही प्रेम, सेवा अखलाक (आदर्श चरित्र) दूसरों की मुसीबतों को हटाने के लिए था और यह सब भी बेलौस (निःस्वार्थ) था। उसी प्रेम ने सब सूरतों को बॉधकर रखा है। जहॉ तक मैं घूमा, उस पैमाने के बुजुर्ग दुलर्भ अर्थात नही ंके बराबर हैं। इस विद्या को हॅसते खेलते बख्श देना, यह आपकी ही हिम्मत थी।

आज इस हिम्मत की बदौलत जहॉ तक मैं अन्दाजा कर सका लगभग पॉच या छः लाख आदमी आपके अनुयायी हैं। चाहे वे किसी भी हमारे भाई से ताल्लुक रखते हों, हर जगह मौजूद हैं। सभी भाई अपने बुजुर्गों का साया सिर पर समझ कर हिम्मत से काम करते रहेंगे तो उम्मीद है कि उनका नाम और रोशन होगा।

परमात्मा हर तरह से उनकी आत्मा को शान्ति दे और उनका प्रेम हमस ब भाईयों को गायबाना अब भी मिलता रहे।

ओउ्म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

लेखकः
स्व0 परम् संत डा0 श्याम लाल सक्सेना
गाजियाबाद।

परम संत बाबू जी महाराज
(डा॰ श्याम लाल सक्सेना)

दास
परम पूज्य डा.आर. के.सक्सेना
पू. बड़े भैय्या जी , सेठ भाई साहब
जन्म-3.7.1931
निर्वाण-9-2-2002
बुलन्द शहर
गाजियाबाद

परम सन्त सदगुरु डा0 श्याम लाल सक्सेना

सच हुआ जो कुछ कहा थ तूने अंतिम काल में,
मेरे भक्तों के लिए उद्दीप्त हो उठेगा दीप।
अनकहे दौडेंगे उस पर सद्विवेकी प्रेम में,
आज है तेरी कृपा से प्रज्जवलित शुभ दीप वह।
दिव्यता पाते हैं जिससे सद्भिलाषी ब्रह्मज्ञान,
भाग्युदय होंगे स्वतः ही जो रमें गुरु प्रेम में।

जन्मः– परम् पूज्य डा0 श्याम लाल सक्सेना जी, परम् सन्त लालाजी महाराज (महात्मा रामचन्द्र जी महाराज) फतेहगढ़ी के शिष्यों में उम्र में सबसे छोटे थे। आपका जन्म ग्राम कटिया, पोस्ट ककराला, जिला बदायॅू मे एक सम्पन्न जमींदार कायस्थ परिवार में 1 जनवरी, 1901 में हुआ। आपके पिता का नाम मुंशी लाला प्यारे लाल था जो कि एक हनुमान भक्त थे जो बदायॅू तथ आसपास के इलाके में अपने सदाचार और सज्जनता के लिए प्रसिद्ध थे। जैसा कि बताया जाता है कि मुशी प्यारे लाल जी के बहुत दिनों तक कोई सन्तान नहीं पैदा हुई थी। आपका जन्म एक सदा सुहागिन संत के आशीर्वाद से हुआ था, आप उनके ज्येष्ठ पुत्र थे।

आध्यात्मिक जीवनः– अपने गुरुदेव परम् पूज्य लालाजी महाराज से आपकी भेंट अक्टूबर, 1915 में हुई थी, जब आप पढ़ाई के सिलसिलें में फतेहगढ़ गये हुए थे। उस समय आपकी उम्र केवल साढ़े चौदह वर्ष की ही थी। उस प्रथम भेंट के बाद जब तक आप फतेहगढ़ रहे, प्रतिदिन उनकी सेवा में जाने लगे और वहीं से उनकी पारमार्थिक शिक्षा का प्रारंभ हुआ। फतेहगढ़ से स्कूल लिविंग पास करने के पश्चात् आप उन्हीं की आज्ञा से आगरा मेडिकल कालेज में डाक्टरी पढ़ने गये। उन्हीं के साथ परम् पूज्य लाला जी महाराज ने अपने प्रिय शिष्य डा0 श्रीकृष्ण लाल जी को डाक्टरी पढ़ने के लिए भेज दिया जो कि उस समय फतेहगढ़ में ही नौकरी करते थे। चलते समय यह दो शब्द कहे, बेटे, पेशे दो ही हैं, सबसे अच्छा डाक्टरी फिर मास्टरी। बाकी सब पेट पालने के जरिए हैं। अगर डाक्टरी में नियत साफ है और सेवाभाव है तो सोने पर सुहागा है। यह दोनों लोग डाक्टरी पास करने के बाद प्रैक्टिस करने लगे और

डा0 श्याम लाल जी अलापुर, जिला बदायूँ जो कि उनके गॉव से केवल दो किलोमीटर की दूरी पर थ, वहॉ प्रैक्टिस करने लगे। आपकी प्राइवेट प्रेक्टिस आरम्भ से ही बहुत अच्छी थी। परम् पूज्य लालाजी साहब जब बदायूँ में अपने किसी रिश्तेदार से मिलने गये तो कहा 'बेटे बड़े भाग्यशाली हो कि पहले ही महीने से तुम्हारी इतनी अच्छी प्रैक्टिस चलने लगी पर प्रोइवेट प्रैक्टिस में बेटे एक जगह बॅधकर रह जाओगे, हमें तुमसे काम लेना है, अच्छा होता तुम सरकारी नौकरी में रहते।'' परम् पूज्य डा0 श्याम लाल जी ने अपनी बहुत अच्छी प्रैक्टिश छोड़कर 120 रूपये माहवार की सरकारी नौकरी ज्वाइन कर ली। आपके पिता जी उनसे बहुत प्रेम करते थे, उनको बहुत दुःख हुआ परन्तु यह समय ऐसा थ कि आपलोग परम् पूज्य लालाजी पर न्यौछावर हो चुके थे। उनके तन मन पर वह छा चुके थे। उनका जरा सा इशारा उन सबके लिए ब्रह्म वाक्य सा हो गया था।

सन् 1921 में आपको परम् पूज्य लालाजी साहब ने दीक्षा दी और सन् 1928 में इजाजत देकर कहा 'मेरे मिशन को भूले भटकों में फैलाओ। ईश्वर तुम्हारी मद करे, यही मेरे लिए सबसे बड़ी सेवा होगी।'' आपने परम् पूज्य लालाजी महाराज साहब के हर आदेश का हूबहू पालन किया। उदाहरण के तौर पर आपने कहा थ कि 'मुझसे और नन्हें (पूज्य चाचा जी साहब) में कोई फर्क नहीं। एक तस्वीर के दो पहलू हैं इधर देखोगे तो मुझे पाओगे, उधर देखोगे तो नन्हें को' इस बात का आपने पूरी जिन्दगी हूबहू पालन किया और उनकी बहुत इज्जत की।

परम् पूज्य चाचा जी महाराज भी आपसे बहुत प्रेम करते थे और आपने भी आपको इजाजतें दी थी। हर तरह से दुनिवावी और रूहानी शफक्कत आपने इनको दी थी। इत्तेफाकन एक रोज मिसराइन जो कानपुर में खाना पकाती थीं, पूज्य चाचा जी साहब से कहने लगीं, यह लड़का आपकी बहुत खिदमत हर तरह से करता है। आपने मोहब्बत से भरकर फरमाया 'यह हमारे ही तो बच्चे हैं जैसे बिरजू, मुंशी ज्योति''। इसी प्रकार परम् पूज्य लालाजी महाराज ने आपके पत्र के उत्तर में जो 'अनमोल धरोहर' के पेज नम्बर 29 में अंकित है जिसमें आपने लिखा है श्याम लाल मैं तुमसे कभी बात भी नहीं करता हूॅ। मैं जानता हूॅ जो लोग ऐसे हैं जो मुझको कभी नही छोड़ेंगे, उनसे कुदरतन ऐसा ही बर्ताव होता

है। जगमोहन को कसदन (जानबूझ कर) आज तक तालीम नहीं दी है। तुम्हारा काम है कि जो कुछ मेरे पास है जबरदस्ती छीन लो।'

पूज्य बाबू बृजमोहन लाल जी साहब ने भी आपको बहुत प्रेम दिया और उनके पास गाजीपुर, बुलन्दशहर और अन्य जगह जहॉ वह रहे, गये और अपनी इजाजत भी बख्शी। संक्षेप में कहने का तात्पर्य यह है कि वो, दोनों परिवार से वैसा ही प्रेम करते रहे और निभाते रहे। परम् पूज्य लालाजी साहब एवं परम् पूज्य चाचा जी महाराज एवं बाबू बृजमोहन लाल जी एवं पूज्य जगमोहन लाल के विसाल के बाद उनके बच्चों और परिवार को वही आदर और पूज्य जगमोहन लाल के विसाल के बाद उनके बच्चों और परिवार को वही आदर और प्रेम दिया। आज 2009 में फतेहगढ़ के भण्डारे का जो यह विशाल रूप देख रहे हैं उसका समस्त श्रेय श्री अखिलेश जी जो उनके पोते थे, उनको ही है। परम् पूज्य लालाजी महाराज के जन्म शताब्दी 1973 में डा0 श्याम लाल जी परम् पूज्य बाबूजी की प्रेरणा एवं उत्साह के बल पर भीषण बीमारी में भी श्री अखिलेश जी ने समाधि के सामने लेटे–लेटे सब संचालन किया। डा0 श्यामलाल जी ने उन्हें उत्साहित किया ''बेटे तुम ऐसे बुजुर्ग के वंशज हो, जो क्या नहीं कर सकते, होनी को अनहोनी कर दें। हिम्मत करों और सबको पत्र लिखो, ईश्वर और बुजुर्ग तुम्हारी मदद को तैयार हैं।'' वर्तमान में पूज्य दिनेश जी एवं प्रिय विनय दोनों उन्हीं से दीक्षित हैं और फतेहगढ़ भण्डारे का काम बड़ी लगन और निष्ठा से कर रहे हैं।

उन्हें अपने गुरु परिवार से अनोखा प्रेम और सेवा का भाव था जो कि उनके जीवन का लक्ष्य था। गुरु भाईयों में डा0 श्रीकृष्णलाल जी पूज्य ताऊ जी जो कि परम् पूज्य लालाजी महाराज के मुराद कहलाते थे, उनसे उनका सम्पर्क पूरे 55 वर्ष रहा जो अपने में एक अनोखा उदाहरण है। दोनों का परस्पर प्रेम अवर्णनीय रहा है। उन्होंने भी उन्हें पूर्ण इजाजत दी थी जो कि उनके जीवन चरित्र ''अनमोल संत चरित्र'' के पेज नं0 112 पर छपा है। आप दोनों में प्रेम इतना प्रगाढ़ था कि उस समय जिसने देखा है वह भूल नहीं सकता और दोनों को एक जान दो कालिब कहते थे।

अपने वरिष्ठ गुरू भाई परम पूज्य डा0 चतुर्भुज सहाय जी से भी आपका बहुत लगाव था। आप डा0 चतुर्भुज सहाय जी की बहुत इज्जत

करते थे और आप डा0 श्यामलाल जी से बहुत प्रेम करते थे। आपने अपने लड़के पूज्य वृजेन्द्र जी को उनके सुपुर्द किया थ। डा0 श्यामलाल जी साहब पूज्य बाबूजी उनके सब भण्डारों में एटा, मथुरा, टुण्डला जाया करते थे।

परमार्थ का काम आपने परम् पूज्य लाला जी महाराज के जीवनकाल में आरम्भ किया था और आगरा मेडिकल कालेज में आपके चार सहयोगी क्लास फेलो आप दोनों की रहनी–सहनी, व्यवहार से प्रभावित हो परमपूज्य लालाजी साहब के चरणों में आये। उनमें डा0 छोटेलाल, डा0 महेश्वर सहाय, डा0 बृजवासी लाल, डा0 सुखवासी लाल चारों दीक्षित हुए। इसके अतिरिक्त आप अपने दोनों बहनोई श्री प्रेम नारायण दलेला तथा श्री सेवती प्रसाद मुख्तार, कासगंज को भी उनकी सेवा में लाये और वे दोनों भी उनसे दीक्षित हुए।

सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आप आपने जन्म स्थान बदायूँ को छोड़कर (क्योंकि बदायूँ मेन लाइन पर न होने पर सत्संग के काम में बाधा पड़ती थी) 7, रामाकृष्णा कालोनी, गाजियाबाद में बस गये और बड़ी निष्ठा, लगन, परिश्रम से परम् पूज्य लालाजी महाराज का काम करने लगे। सन् 1963 में आपने यहीं गाजियाबाद में सतसंग को भण्डारे का रूप दिया और बस अब आपका जीवन पूर्णरूप से परमार्थ को समर्पित कर दिया और अपने जीवनकाल में लगभग 600 लोगों को दीक्षा दी और लगभग 1000 लोगों को रास्ते पर डाल दिया। उनका मिशन उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, केरल, उड़ीसा, बंबई, यहॉ तक कि विदेश में भी है। जर्मनी के एक व्यक्ति ने 02.05.1987 में आपको एक पत्र लिखा कि जो इनके जीवन चरित्र ''अनमोल चरित्र'' पेज नं0 188 पर छपा है। श्री एच0 वेई नामक इस व्यक्ति ने बहुत खोजकर यह निर्णय लिया कि आप डा0 श्यामलाल जी ही उसे परम् संत लालाजी महाराज के बारे में बता सकते हैं। डा0 श्याम लाल जी प्रवचन जो संक्षेप में आप बहुत सच्ची और बात को जैसी की तैसी कहते थे, जिसका प्रभाव लोगों पर बहुत पड़ता था।

आपने अपने जीवनकाल में ही अपने दोनों पुत्र डा0 आर0के0 सक्सेना एवं डा0 वी0के0 सक्सेना को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। इन दोनों भाईयों ने उनके मिशन को सुचारू रूप से चलाया।

उनके पुत्र डा0 आर0के0 सक्सेना ने पूरे 14 वर्ष तक उनके कार्य को बड़ी अच्छी तरह करते हुए उन्हीं के निवास स्थन पर 09 फरवरी, 2002 को निर्वाण प्राप्त किया। उन्होंने अपने पिता द्वारा सौंपे गये काम को पूर्ण समर्पण के साथ बड़े प्रेम से किया।

वर्तमान में सेवक (डा0 वी0के0 सक्सेना) अपने यथाशक्ति उत्तरदायित्व का पूर्ण निर्वहन करते हुए परमार्थ का काम बड़े परिश्रम एवं निष्ठा से पूर्ण समर्पण की भावना से ओत–प्रोत होकर कर रहा हूॅ। वही इसको पूर्ण कराने वाला है।

आपने अपने जीवन काल में दो पुस्तकें जिनका नाम 'सन्तमत साधना'' भाग–1 एवं भाग–2 लिखी जो कि इस ब्रह्म विद्या की अनमोल पुस्तकें हैं। वर्तमान में उनके सत्संग द्वारा बहुत सी पुस्तकें प्रकाशित हैं जिसमें '' पूजा की विधि'' अमूल्य है।

परमार्थ का निचोड़ उन्हीं के शब्दों में निम्नलिखित है:–

1. ईश्वर ने दया करके हम सबको मनुष्य शरीर दिया है।
2. हमारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए कि हम अच्छे मनुष्य बनें।
3. अच्छे मनुष्य बनने के बाद हम मुकम्मिल इंशान बनें।
4. एक मुकम्मिल इंशान ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।
5. मनुष्य को अपने जीवनकाल में ही वक्त के जीवित सत्‌गुरु की तलाश करके और दुनिया की सब फिजूल की बातों को छोड़कर लग लिपट कर अपना काम बना लेना चाहिए, या तो उनके हो जायें या तो उनको अपना बना लें। यह मनुष्य अपने जीवनकाल में ही कर सकता है जिसकी पहचान यह है कि गुरु के विचार उस पर उतरने लगते हैं और उसकी निस्बत उनसे कायम हो जाती है। हमारे यहॉ का तरीका अनुराग का है, वैराग का नहीं। गुरु से इतना प्रेम बढ़ जाये कि दुनिया का प्रेम स्वयं समाप्त हो जाये और 24 घण्टे अपने गुरु का ख्याल बना रहे। आपका वसूल था कि –

   '' Think Good, Do Good, and Be Good"

आपने अपने वसीयत में लिखा है कि ''फतेहगढ़ हमारी जड़ है, हम सब का धर्म है कि जब भी मौका मिले, वहॉ जायें और उस दरबार की इज्जत करें।''
आज भी उनके अनुयायी उनकी इस आज्ञ का पालन कर रहे हैं और बड़ी संख्या में वहॉ जाकर सलाम पेश करते हैं।

बुजुर्गों की मजार और समाधियों पर आप बड़ी ही शफक्कत एवं पूरे इज्जत से जाते थे और सबसे कहते थे मजार और समाधि पर बहुत अदब से जायें। यह डर होना चाहिए कि बेअदबी न हो। 1970 से पूज्य डा0 श्यामलाल जी ने सभी मजारों, आदरणीय परम्पूज्य फजलअहमद साहब, परम्पूज्य अहमद अली साहब, परम संत मुरादउल्लाह साहब आदि की मजारों पर गये और सदा यह प्रयास रहा कि उनको सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रखा जाये। केवल सलाम करने से इतना फायदा नहीं होता है जितना आप उनको हाजिर नाजिर जानकर जो कुछ उनके लिए कर सकते हैं, करें। सन् 1970 से पहले सभी मजारें जर्जर अवस्था में थीं, परन्तु उनके अथक प्रयास से पूज्य मौलाना मंजूर हसन साहब ने रायपुर की मजार तथा कायमगंज के कुछ लोगों ने पूज्य अहमद अली साहब की मजर को वर्तमान में बहुत अच्छी हालत में कर दिया है।

आपकी समाधि गाजियाबाद में जी0टी0रोड पर ग्राम बिश्नोई में स्थित है और आपके द्वारा आरम्भ किया हुआ भण्डारा वहीं हर वर्ष दशहरे में होता है। आपकी स्मृति स्थल लखनऊ में देवस्थली आश्रम में ग्राम चकगंजागिरि में स्थित है, जहॉ आपके निर्वाण तथा जन्म दिन का भण्डारा 29 दिसम्बर से 1 जनवरी तक सम्पन्न होता है।

लेखक:
डा0 वी0के0 सक्सेना
बी–1 / 26 सेक्टर–के,
अलीगंज, लखनऊ

प्रार्थना

ऐ मालिकों के मालिक, खालिक है नाम तेरा।
आला है शान तेरी अरफा मुकाम तेरा।।
लेता है सच्चे दिल से जो कोई नाम तेरा।
बिगड़ी हुई बनाना अदना है काम तेरा।।
क्या शेख क्या ब्राह्मण, क्या रद क्या कलंदर।
बढ़ते हैं सब वजीफा ही सुबह शाम तेरा।।
रखता हूँ मुद्दतों से बस एक ही आरजू।
हो कर रहे ये मौला बन्दा गुलाम तेरा।।
तू पासवॉ हमारा, तू राजदॉ हमारा।
तुझको सलाम मेरा, तू रहनुमा हमारा।।

सभी प्राणियों के जानने योग्य मुख्य बातें

1. हर प्राणी को यह पूरा यकीन करना होगा कि ईश्वर है, वही सृष्टि का रचने वाला और उसका नाश करने वाला है।
2. यह दुनिया उसी की बनायी हुई है और उसी के अनुसार चलेगी।
3. इसमें किसी प्राणी का कोई दखल नहीं हो सकता है।
4. ईश्वर का ना कोई रूप है, न कोई नाम है, प्राणी को स्वयं उसका नाम और रूप निर्धारित करना होता है, जिस नाम से पुकारोगो, उसी नाम से वह उत्तर देगा, जिस रूप से देखोगे, उसी रूप में दिखायी देगा।
5. हर प्राणी की यह दुनिया कर्मयोनि, भोगयोनि और मोक्ष योनि के लिए ही है।
6. ईश्वर की बनाई हुई हर चीज से प्रेम करो। इसीलिए हमारी शिक्षा में, मुख्य है प्रेम करो, प्रेम सीखो, प्रेम सिखाओ।
7. हर प्राणी को सदा यही लक्ष्य रखना चाहिए–अच्छा सोचो,अच्छा करो, अच्छा बनो, के फार्मूले को जीवन में अपनाना चाहिए।
8. जिस हाल में ईश्वर ने रखा है,उस हाल में खुश रहने की पूरी कोशिश करें क्योंकि यह हमारी भोगयोनि है और इसके लिए भी ईश्वर ने निश्चित समय या उम्र दिया है। इसलिए उसमें सुख–दुःख लगे रहेगे, उसको खुशी–खुशी भोगो और ईश्वर की नेमत समझ कर भोगो क्योंकि यह तो हमारे ही भोग हैं, फिर काहे का गिला शिकवा। यह तो उसकी दया है कि वह हमें भोगों को भोगकर मुक्ति का रास्ता खोल रहा है, जो कि हमारे जीवन का लक्ष्य है।

9. उसकी दी हुई नेमतों का कभी दुरूपयोग न करें बल्कि उसका सदुपयोग मानव मात्र की भलाई के लिए करें।
10. न कभी बुरा सोचो, न देखो, न कहो, न करो, यही इन्द्रियों का सदुपयोग है तथा उसकी दी हुई नेमतों का सदुपयोग है।
11. हमेशा अपनी मौत पर नजर रखो और यह सोचो समझे कि जो समय बीत गया,उसको भूल जाओ, बचे हुए समय का सदुपयोग करके अपनेजीवनके लक्ष्य को प्राप्त करने की कोशिश करो।
12. उस मालिक पर पूरा भरोसा रखो कि तुम्हारा भविष्य अच्छा होगा क्योंकि वह न्यायकारी है, हर व्यक्ति के साथ न्याय करता है, यही तो उसका सबसे बड़ा गुण है।
13. ईश्वर के गुणों के अपनाओ और उसकी जबान से प्रशांसा करो, मन से ग्रहण करो और बुद्धि से पालन करो।
14. ईश्वर के छः गुण है, दया, दान, दीनता, क्षमा, सच्चाई और प्रेम। ईश्वर को प्रेम, सच्चाई,दीनता बहुत प्रिय है,जिसने इन गुणों को अपनाया है, वह ईश्वर को बहुत प्रिय होता है,इसीलिए मनुष्य जीवन की महानता है।
15. मानव में छः अवगुण हैं,उनका धीरे–धीरे त्याग करो वह इस प्रकार हैं– काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, अहंकार जो हर व्यक्ति में रहते हैं, वह अपने जीवन काल में ही छोड़ सकता है।
16. मनुष्य जीवन का लक्ष्य यह है कि जिस व्यक्ति में वो ईश्वरीय छः गुण हों, उसकी तलाश करे, सोहबत उठाये और यदि उसका मन पूर्ण तरह से समर्पित हो जाये तो उसी को अपना गुरु , गाइड, रहबरमानकर उसके जीवनकाल में उस जैसा बनने की कोशिश करे। यदि नबन सके, उसके द्वारा नियुक्त या बताये हुए व्यक्ति को साथी या मुर्शिद मानकर उसके साथ रहकर अपनेगुरु जैसा बनने की कोशिश आखिरी वख्त तक करे। जो लोग ऐसा नहीं करते और अपनी अक्ल लगाते हैं, इसका मतलब कि उन्हें अपने गुरु पर भरोसा नहीं है और अपने मन के गुलाम हैं।
17. ईश्वरीय या गुरु के गुण एक साथ नहीं आते और वो लोग भाग्यशाली होते हैं जो एक ही जन्म में लक्ष्य पूरा कर लेते हैं।
18. हर व्यक्ति स्वयं अपना आकलन (Assessment) कर सकता है। यदि ये गुण आ गये हैं तो रास्ता सही है। यदि नही ंतो कहीं न कहीं कमी है, उसको दूर करने की जल्द से जल्द पूरी कोशिश करें।

19. दुनिया की सभी चीजें इन गुणों के ग्रहण करने में बाधक हैं, उन सबको मन से त्याग दो, उनको त्यागना ही असली वैराग्य है।
20. ईश्वरीय गुण या गुरु जैसा बनने के लिए बाधक शैतान या माया है, जिसके तीन रूप हैं – स्त्री, पैसा एवं अहंकार।उनके कारण अलग–अलग हो सकते हैं, रूप यही है।
21. माया हर व्यक्ति को बिना परीक्षा लिए मायापति (ईश्वर) तक नहीं पहुँचने देती । स्वयं देवी सीता को जो भगवान राम की पत्नी थीं, कैसे–कैसी अग्नि परीक्षा देनी पड़ी।
22. अपे को ही पहचान लेना ईश्वर को जान लेना है। पूर्ण ईश्वर को कोई नहीं जान सकता है, वह अगम है, न कोई ईश्वर को पूर्ण रूप से जान सका है, न जान पायेगा।
23. ईश्ष्वर को व्यक्ति न ज्ञान, से न भक्ति से, न कर्म से जान सका है, केवल प्रेम से उसका दास बनने से उसकी अनुभूति या अनुभव किया जा सकता है और यही हमारे यहाँ का रास्ता है, जिसके अधिष्ठाता परम् पूज्य लालाजी महाराज साहब (परम् संत राम चन्द्र जी सहाय) हैं। मेरे पूज्य गुरुदेव डा0श्रीकृष्ण लाल जी,और मेरे मुर्शिद कामिल पिता श्री डा0 श्याम लाल सक्सेना ने अपने समस्त जीवनकाल में यही गुण और रास्ता अपनाया और जीवन को सफल किया और लाखों का मार्गदर्शन किया। न हमारा कोई मजहब है, न कोई धर्म है, न हमारा किसी मजहब न धर्म से वास्ता है। हम मनुष्य हैं, हमें ईश्वरने मनुष्य पैदा किया है,अच्छा मनुष्य बनना ही हमारा धर्म है। मुकम्मिल मनुष्य बनना ही हमारा मजहब है। यही हमारे जीवन का असली लक्ष्य है। हम हर धर्म और मजहब का आदर करते हैं, परन्तु लक्ष्य हमारा मुकम्मिल इंसान बनना ही है।

यह सेवक डा0 वी0के0 सक्सेना भी नक्शे कदम पर चलकर इस जीवन के अमूल्य लक्ष्य को प्राप्त करने की पूरी कोशिश कर रहा है।

सभी भाइयों से अनुरोध है, प्रार्थना है, कि समय को गनीमत जानकर लग लिपट कर लक्ष्य पूरा करने की कोशिश करें और जीवन को व्यर्थ नजा ने दें।

ईश्वर सबका कल्याण करे।

—डा0 वी0 के0 सक्सेना
बी—1/26 सेक्टर—के,
अलीगंज, लखनऊ।

प्रिय बन्धुजन,

आज हम लोग परम् पूज्य बाबूजी महाराज (परम् पूज्य डा0 श्याम लाल सक्सेना) द्वारा स्थापित किए गये गाजियाबाद के 47 वें भण्डारे में हर वर्ष की भॉति भिन्न–भिन्न प्रान्त से सभी प्रेमीजन पधारे हुए हैं।

इस सेवक (डा0 वी0के0 सक्सेना) ने अपने जीवन के 77 वर्ष में प्रथम 28 वर्ष अपने परम् पूज्य गुरूदेव डा0 श्रीकृष्ण लाल जी की पुण्य सोहबत एवं स्नेह छत्रछाया में तथा 55 वर्ष सोहबत स्नेह अपने आदर्श पिता तथा मुर्शिद कामिल परम् पूज्य डा0 श्यामलाल सक्सेना के सानिध्य से जो कुछ पाया, जो कुछ सीखा तथा जो कुछ अनुभव से समझ कर निष्कर्ष निकाला है, वह आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूॅ:–

हमारे सन्तमत के अधिष्ठाता परम् सन्त श्री राम चन्द्र जी सहाय, परम् पूज्य लालाजी महाराज ने एक बार फर्माया था कि गोकि उन्होंने बवख्त सत्संग एवं भण्डारा फरदर–फरदन ईश्वर प्राप्ति के साधन सभी प्रेमीजनों को बताया है पर कुछ दिक्कतों के कारण उसको कलमबद्ध न किया जा सका जिससे जैसा वो चाहते थे वैसी विद्या लोगों को समझ न आ सकी। इसी संदर्भ में उने सभी प्रिय शिष्यों ने अपनी अपनी तरह से उनके सिद्धान्तों को पुस्तक का रूप दिया है। मैं भी अपना फर्ज समझता हॅू कि उन महानुभाव के परमार्थी अनुभव व सिद्धान्तों को एक अपने निजी अनुभव मूल रूप में लिख कर आप सब तक पहुॅचाऊॅ। ये परमार्थ का सार है, सिद्धान्त नहीं, अनुभव है, दर्शन नहीं।

धर्मः–

धर्म की सबसे सूक्ष्म परिभाषा ईश्वर का सच्चा ज्ञान है। सृष्टि की रचना के साथ ही धर्म भी अवतरित हुआ है। इससे धर्म तो वास्तव में सनातन धर्म ही है, जिसका न आदि है, न अंत है, जिसके संक्षेप में निम्नलिखित बिन्दु हैं:–

1. हर मनुष्य को यह पूर्ण विश्वास हो कि ईश्वर है, केवल वही सम्पूर्ण सृष्टि का रचियता है, वही सर्वशक्तिमान तथा अनन्त है, वही उसका विनाश करने की शक्ति रखता है अर्थात इस सम्पूर्ण सृष्टि का संचालन केवल उस ईश्वर के ही हाथ में है। संसार की प्रत्येक छोटी बड़ी घटना उसी के संचालन से है।

2. ईश्वर केवल एक ही है, उसका न कोई नाम है, न कोई रूप है, उसको नाम एवं रूप संतों ने उसके गुणों के आधार पर दिए हैं। वह

ईश्वर बीज रूप से हमारे घट के अन्दर आत्मा के रूप में विराजमान है। इसी से ईश्वर के प्राप्ति के रास्ते को घटमार्ग कहते हैं। मनुष्य उसकी सबसे श्रेष्ठ रचना है क्योंकि केवल मनुष्य को ही उसने ज्ञान दिया है। ज्ञान पशुओं, पक्षियों एवं वनस्पतियों को भी होता है, यह विज्ञान द्वारा सत्यापित कर दिया गया है परन्तु उसका ज्ञान सहज ज्ञान है। मनुष्य को ईश्वर ने श्रेष्ठतम विवेक देकर संवार में भेजा है जिसके प्रयोग से वह अपने जीवन को सार्थक करके सदा सदा का विश्राम पा जाये, अपने अंशी ईश्वर में लीन हो जाये।

3. हर ज्ञान के लिए चाहे वह दुनिया का हो या दीन का, गुरू की आवश्यकता पड़ती है। गुरू का अर्थ है जो आपको गाइड करे, सतगुरू से आशय है जो आपको अपनी आत्मा साक्षात्कार करा सके। इसी कारण रामायण में गोश्वामी तुलसीदास ने ''नर रूप हरि'' की संबा से गुरू का सम्बोधन किया है। अर्थात गुरू नर रूप में ईश्वर है और इसी से उन्होंनें गुरू की वन्दना प्रथम की है। वही एक ऐसी हस्ती है जो आपकी आत्मा का साक्षात्कार करा सकती है। हर व्यक्ति के आत्मा के 3 गुण हैंः–

(1) अनन्त, उसका कभी नाश नहीं होता।
(2) सर्वज्ञान, पूर्ण ज्ञान।
(3) पूर्ण आनन्द, प्रेम स्वरूप।

गुरू में गुण वही है, परन्तु सूक्ष्म रूप से।

ईश्वर ने तथा सभी संतों ने उसके प्राप्ति के ज्ञान के लिए गृहस्थ जीवन को श्रेष्ठतम माना है। भगवान राम ने जो कि अवतार पुरुष थे, उन्होंने भी गृहस्थ जीवन को ही अपने जीवन का आधार बनाया। मानवीय एवं ईश्वरीय गुणों के विकास के लिए गृहस्थी एक सम्पूर्ण पाठशाला है।

<u>मनुष्य जीवन का मुख्य कर्तब्यः–</u>

मनुष्य जीवन के मुख्य कर्तब्य यह हैं कि वह समय के किसी जीवित संत सतगुरू की खोज करे और ज बवह मिल जाये तब पूरी आस्था विश्वास के साथ पूरी लगन निष्ठा से उसकी शरण में जाये और उन्हीं का हो जाये, चाहे उसे इस कार्य में कितने जन्म लग जायें पर ईष्वर को सदा सच्चे दिल से याद करते रहो और गिड़गिड़ाते रहो कि हे प्रभो! आप कब मिलेंगे। ईश्वर बड़े दयालु हैं, जब उनकी दया होगी तभी

तुम्हें सतगुरू मिलेंगे और जब सतगुरू की अपार दया होगी तभी तुम्हें ईश्वर मिलेंगे।

<u>सच्ची पूजा क्या है, इसका तरीका क्या हैः–</u>

पूजा या साधन का सच्चा स्वरूप गुरु चरणों में समर्पण है, जिसका सीधा अर्थ है उनके ख्याल को 24 घण्टे अपने हृदय में बसाना, उनके स्वरूप का जीवन्त अनुभव करना, उनके विचारों को अपने मन में उतारना और हर क्षण उनकी याद और ख्याल का मन में बसे रहना ही सच्ची साधना है। उस साधना का वास्तविक क्षेत्र यहाॅ सत्संग है जहाॅ आपको वह सतगुरू दया करके अपने स्वरूप का भान करा देता है, तभी आपको उस पर विश्वास होता है। सत्संग से विश्वास में दृढ़ता आती है और दृढ़ विश्वास ही प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। जब उस प्रेम में पराकाष्ठा हो जाती है तब समण लीलिए आपको सच्ची पूजा का गूढ़ रहस्य समझ में आ गया। जैसे भी हो गुरु से सच्चा प्रेम करना ही सच्ची पूजा है। तरीका यह है कि अपने मन को हर समय गुरुदेव में लगाये रहने के लिए ओउ्म मंत्र का जाप करें। ओउ्म मंत्र सर्वोत्तम मंत्र है क्योंकि उसमें इन्द्रियों का प्रयोग नहीं होता है। यह स्वॅास से संचालित होता है। इस कारण जीवन के अन्तिम स्वॅास तक यह मंत्र चलता है। यही कारण है कि शास्त्र में हर मंत्र का आरम्भ ओउ्म से ही होता है और अंत में ओउ्म् शान्ति से।

<u>याद और ख्याल का अन्तर व लाभः–</u>

याद पूजा का प्रथम अंग है। याद का शाब्दिक अर्थ सुमिरन है। सुमिरन वही व्यक्ति कर सकता है जिसने सद्गुरू की सोहबत उठाई हो। याद का अंग ही सोहबत है। कैसे रहते, कैसे बोलते, कैसा उनका चलना, हॅसना, प्रेम से मिलना, स्वरूप यह सब याद या सुमिरन के अंग हैं। याद उसी व्यक्ति को जायेगी जिसने अपने सदगुरू का जीवनकाल में सहज स्वरूप देखा है। यह सर्वोत्तम भक्ति है। सूफी सन्तों ने और सभी सन्तों ने तथा गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रामचरित मानस में नवधा भक्ति के प्रसंग में लिखा है ''प्रथम भगति संतन कर संगा।'' यह संतों को संग ही सोहबत है और यही सोहबत याद का पुण्य क्षेत्र है।

ख्याल का अर्थ है सोच। जब कोई सन्त या व्यक्ति अपने सद्गुरू की चर्चा इतनी तल्लीनता से करे कि लगे कि हम स्वयं उनको अनुभव कर रहे हैं, कल्पना की पराकाष्ठा ही ख्याल है। आरम्भ में हम कल्पना

करते हैं, जब हम उनकी चर्चा सुनते हैं और वही कल्पना ख्याल करते करते जीवन्त रूप ले लेती है और जब हम किसी महापुरुष या सन्त की चर्चा सत्यता और श्रद्धा से सुनते हैं और उनका सच्चाई से ख्याल करते हैं तो उन महापुरुष और हमारे ख्याल के बीच में एक ऐसा सुदृढ़ सम्बन्ध बन जाता है कि वह हमें दर्शन भी देते हैं और दया करके हमारे साधना में हमारे गुरुदेव के माध्यम से बड़ी सहायता भी करते हैं। इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास ने दूसरी भक्ति का स्थान – ''दूसरि भगति मम कथा प्रसंगा।'' ख्याल को भी दिया है। वाल्मीकी जी के प्रसंग में महर्षि वाल्मीकी ने कहा है ''हे राम आप उनके हृदय में बसिये जिनके कान सदा आपकी चर्चा सुनते हुए तृप्त नहीं होते।''

सद्गुरु के स्वरूप और ओउ्म् के नाम और ख्याल एवं सुमिरन से बहुत आध्यात्मिक लाभ होता है। जिस समय सद्गुरु ईश्वर के ध्यानमें उससे मिला बैठा रहता है तो उसके प्रभाव में आने वाला स्थान पवित्र तथा उसके सम्पर्क में आने वाले उस आत्मिक औरा (Aura) के प्रभाव से बहुत प्रभावित होते हैं और सबको बहुत लाभ होता है। अधिकारी व्यक्ति को तो होता ही है, और वह उसका अनुभव भी करता है पर अनाधिकारी व्यक्ति को भी लाभ होता है। तथापि वह उसका अनुभव नहीं कर पाता है। गुरु के स्वरूप के अमरत्व तत्व से साधक की आत्मिक उन्नति होती है और नाम के जाप से माया हमला नहीं कर पाती है। सीता जी जहो स्वयं श्री राम भगवान की पत्नी थीं, उन्होंने भी जब राम नाम की रेखा का त्याग किया, रावण रूपी माया ने उन पर जबरदस्त हमला कर दिया और वह ईश्वर से दूर हो गयीं।

हमारे संतमत में गृहस्थी ही आधार है। गृहस्थ जीवन अति आवश्यक है। आने वाले सभी सूफी सन्तों तथा अन्य संतों ने भी इसको अति आवश्यक माना है। हमारे सभी अवतारों ने भी गृहस्थ जीवन को ही अपनाया। गृहस्थी में यदि अपनी पत्नी अपने बच्चे, अपने रिश्तेदार, अपने मित्र तथा अपनी सोसायटी, यह पॉच सहायक हो जाये तो परमार्थ की राह बहुत सरल हो जाती है। परन्तु अनुभव बताता है और देखने में आया है कि इन्हीं पॉचों की वहज से मनुष्य राह से बेराह हो जाता है। यह ऐसा पंचतंत्र है जो अच्छे अच्छे अभ्यासियों को भी ले डूबता है ओर वह इस पथ से गिर जाता है।

हमारे संतों ने इनको अनुकूल रखने के लिए कुछ बातें बतायी हैंः–

(1) गैर जिन्स की सोहबत से परहेज करें। गैर जिन्स का अर्थ है जो ईश्वर पर या सत्संग में विश्वास न रखते हों। ऐसे लोग चाहे वह रिश्तेदार ही क्यों न हों, उनसे अलहदगी अख्तियार करें।

(2) एक जगह के लोग आपस में मिलकर हो सके तो रोज, नही ंतो सप्ताह में एक बार अवश्य मिलकर सत्संग करें। सत्संग बहुत आवश्यक है।

(3) सत्संगी भाई बहन अपने बच्चों की शादी सत्संग में करें, शर्त यह हो यदि दोनों के विचार परमार्थी हों और बराबर की हैसियत वाले हों। इससे गृहस्थी की गाड़ी बहुत सहूलियत से चलती है और घरी का वातावरण अच्छा रहता है।

(4) स्त्रियों के लिए सबसे उत्तम पूजा है कि वह घर में सुख शान्ति बनाये रखें ओर घर के बच्चों को अच्छे संस्कार दें। उनके घर से कोई उपासा (भूखा) न जाये। ऐसा करके वह घर के वातावरण को परमार्थ के योग्य बनाती हैं, ऐसा परम पूज्य बाबूजी महाराज (डा0 श्याम लाल सक्सेना जी) सदा कहा करते थे।

कुछ अन्य अनुभवी बातें जो परमार्थ के रास्ते में बहुत सहूलियत कर देती हैं:—

(1) मन को कभी खाली न रखें, उत्तम तो यही है कि उसे ईश्वर के काम में लगायें। यदि ऐसा न कर सकें तो अच्छे और दूसरे के भलाई के कार्यों में लगायें। परम पूज्य बाबूजी इसी को अन्तिम समय तक कहते थे कि— अच्छा सोचो, अच्छा करो और अच्छे बन जाओ।

(2) सदा बहुत सकारात्मक विचार रखें, कभी नकारात्मक न सोचें।

(3) हर मनुष्य के पॉच मुख्य ऋण हैं, उसका कर्तब्य है कि वह इनका ऋण चुकायें। माता—पिता का ऋण, भाई बहन का ऋण, रिश्तेदारों का ऋण, दोस्तों का ऋण, सोसायटी का ऋण, देश तथा जन्मभूमि का ऋण। यह ऋण धर्मशास्त्र के अनुसार चुकाना चाहिए। इन सबकी सेवा करना, सुख—दुख में जो जायज हो सहायता करना और सदा उनके बेहतरी के लिए सोचना या प्रार्थना करना ही ऋण का चुकाना है। हमारे गुरुदेव परम पूज्य ताऊ जी महाराज डा0 श्री कृष्ण लाल जी तथा हमारे परम पूज्य बाबूजी डा0 श्याम लाल जी को मैंने देखा है कि जो लोग अपने माता—पिता की अवहेलना करते थे, उनकी तरफ अधिक तवोज्जह नहीं देते थे।

हर व्यक्ति को अपने स्वयं की विवेचना, व्यक्तिगत मूल्यांकन अर्थात सेल्फ असेसमेंट करना चाहिए। दुनिया के हर मनुष्य में 6 अवगुण जरूर विद्यमान रहते हैं:–

1. काम 2. क्रोध, 3. लोभ, 4. मोह, 5. ईर्ष्या, 6. अहंकार।

यह 6 अवगुण की मात्रा किसी में कम किसी में अधिक और किसी में बहुत गुप्त रूप से रहती है, परन्तु सब में पाये जाते हैं। इन्हीं दोषों को समाप्त कर ईश्वरीय 6 गुणों को प्राप्त करना ही असल पूजा,असली परमार्थ,असली तप या पुरुषार्थ और वास्तव में धर्म है। वे ईश्वरीय गुण निम्नलिखित हैं:–

1. दया, 2. दान, 3.दीनता, 4. क्षमा, 5. सच्चाई और 6. प्रेम।

यह अवगुण जिस क्रम में है, उसी क्रम मे छूटते जाते हैं और ईश्वरीय गुणों के उदय का क्रम भी यही होता है। जैसे सबसे पहले दया का ही हृदय में उदय होगा तभी दान की स्थिति बन पाती है।

हमारे यहॉ हमारे अधिष्ठाता परम् पूज्य लालाजी महाराज साहब ने प्रेम और सच्चाई पर ही जोर दिया,उनका कथन था कि जहॉ सब अंत करते हैं, हम वहॉ से शुरू करते हैं।

1. बैलौस प्रेम Unconditional Love
2. पूर्ण विश्वास Complete Faith
3. पूर्ण समर्पण Complete Surrender होना चाहिए।

यही हमारे सिलसिले का आधार है।

हर मनुष्य को यह ज्ञान हो जाये कि यह दुनिया ईश्वर की है, हमसे पहले भी थी, हमारे बाद भी रहेगी। वही इसका मालिक है, वही उसका रचियता है। वही पालनकर्ता तथा वही विनाश एवं विध्वंस करनेवाला है। वही पूजने योग्य है। वही सर्वशक्तिमान है। जो कुछ नेमतें उसने तुम्हें दिया है, उसको गनीमत जानो और उसी पर संतोष करो, यही राजी ब रजा है। सदा यह देखों कि तुम क्या कर रहे हो, यह मत देखों कि दूसरा क्या कर रहा है। आप अपने काम के लिए उत्तरदायी हैं, वह अपने, बेजरूरत क्यों चिन्ता करते हो।

इस बहुमूल्य मनुष्य शरीर का महत्व एक बार समझ कर और दुनिया को अपने से अलग करते हुए असल लक्ष्य को प्राप्त कर हमेशा हमेशा की सुख शान्ति प्राप्त करें जो कि परम लक्ष्य हर एक के जीवन

का है। परम पूज्य बाबूजी महाराज (डा0 श्याम लाल सक्सेना) का यह गुरुमंत्र है कि–

1. बेटे! फिजूल की बातें छोड़कर लग लिपट कर इसी जीवन में अपना काम बना लो।
2. या तो किसी के हो जाओ या किसी को अपना बना लो।
3. Think Good, Do Good and Be Good अच्छा सोचो, अच्छा करो और अच्छे बनो।

ईश्वर आपसब का कल्याण करे।

विनीतः
डा0 वी0के0 सक्सेना

सन्तमत साधना की प्रक्रिया अर्थात विधि

हमारा मत सन्तों का मत है। हमारे अधिष्ठाता परम् पूज्य रामचन्द्र जी सहाय उर्फ पूज्य लालाजी महाराज हैं। जिन लोगों को परम् पूज्य लालाजी से सोहबत का शरफ हासिल हुआ है, वह लोग जिन जिन शगल को करते हैं और जो हमारे आदरणीय पूज्य गुरुदेव डा0श्रीकृष्ण लाल भटनागर एवं आदरणीय पूज्य पिता डा0 श्याम लाल सक्सेना ने बताया, सिखाया या धरोहर के रूप में परम् पूज्य लालाजी महाराज द्वारा दिया हुआ एक नित्य पूजा की विधि दी है,उसका सम्मान हमस ब लोग दिल से करें यह विनती है। हम लोग उन सबको नित्य पूजा में साप्ताहिक पूजा में तथा भण्डारों के अवसर पर करते आ रहे हैं। विश्वास है कि नई पीढ़ी इस प्रक्रिया को मार्गदर्शन या सम्पूर्ण सन्त मत दर्शन मानकर करती रहेगी और बुजुर्गों के फैज से फैजेयाब होगी। बुजुर्ग जब किसी नियम या ध्यान या मंत्र को हमें बताते हैं, तब उसकी शक्ति बहुत बढ़ जाती है क्योंकि वह उनके द्वारा सिद्ध होता है।

नोटः– नीचे लिखे शगल हमारे यहॉ जो किए जाते हैं, उनका नाम लिख रहा हूॅ।उसका पूरा विवरण अर्थि, करने का तरीका ''पूजा की विधि'' नामक पुस्तक में लिखी है। यहॉ संक्षेप में लिखकर पुनरावृत्ति से बचने का प्रयास किया गया है। इन विधियों से मन सधता है परन्तु यह क्रिया है इस सधे हुए मन को चौबीस घण्टे अपने पूज्य गुरूदेव के चरणों में लगाये एवं यह लक्ष्य है और यही पूजा है। जीवन का प्रत्येक क्षण उनके याद में हो जाये यही साधना है, यही सन्तों का मन्त्र है। पूजा की विधि में बताये गये सब शगल केवल आधार हैं, निमित्त है। गुरुदेव या ईश्वर का ध्यान या याद ही लक्ष्य है। जिसपर ईश्वर की कृपा होती है, उसे सद्गुरू मिलते हैं और कल्याण होता है।

प्रातःकाल यदि अकेले पूजा कर रहे हैं तो मेरा ख्याल है–

1. सर्व प्रथम गुरु वन्दना –
   ''हे दीन बन्धु दयाल गुरु केहि भॉति तव गुण गाऊॅ मैं।।''
2. उसके पश्चात गायत्री मंत्र कम से कम 11 बार या 1 माला का जाप।

3. ओउ्म् सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्य करवाव है।
तेजस्वि नावधीतमस्तु, मा विद्विषाव है।। ——पढें।
4. चौमुखा जाप – या फत्ताहो, या रज्जाको, या बहावो, या अल्लाह।''
5. दरूद शरीफ– अल्ला हुम्मा, स्वलै अल्लाह''
6. शजरा बेहतर हो दोनों समय या कम से कम एक बार अवश्य पढ़ें।
7. असल्लाम।
8. दुआ
9. अपने ईष्ट का ध्यान कम से कम आधा घण्टा करें।

नोटः—जो लोग नौकरीपेशा वाले हैं वो इन सब शगल को किसी भी समय दिन भर में कर लें, परन्तु नागा न हो। ध्यान का समय अपनी दिनचर्या के अनुसार निश्चित कर लें जिससे उसी समय मन का झुकाव उधर स्वयं और सहज रूप से होगा। सायं को सायंकालीन गुरु वन्दना तथा ध्यान करें और रात को सोते समय अपने गुनाहों की माफी मॉगें और उनकी दया का शुक्राना करें उनकी याद में सो जायें परम् पूज्य गुरुदेव श्री श्रीकृष्ण लाल भटनागर ने सत्संगियों के लिए दिनचर्या भी लिखीहै परन्तु समय के अनुसार परिवर्तन किया जाता है।

जब सामूहिक सत्संग हो तब सिखाने वाले के ऊपर छोड़ दें, जैसा वो कहे या कराये उसमें पूरी श्रद्धा और पूरे मन से सत्संग करें। उस समय न जाने वह किस मौज में हो, उसमें अपने तनम न बिना किसी तर्क के उनके आदेशों का पालन करें। सन्त जब पूजा कराने बैठते हैं तो वह उस समय ईश्वर से मिले रहते हैं, उस समय वह साधारण शरीर धारी असाधारण शक्ति रूप मानव ईश्वर रूप होता है वो जो कहते हैं, वह ईश्वर वाक्य होता है, इसलिए उस समय साधक को अपनी बुद्धि के स्तर पर उनके कहने को नहीं तौलना चाहिए।

गुरूदेव कल्याण करें
ओउम् शान्ति, ओउ्म शान्ति।

परम् पूज्य लालाजी महाराज के प्रिय भजन

परम् पूज्य लालाजी महाराज का गाना बहुत सुरीला और मन को मोहने वाला था। परम् पूज्य बाबूजी बताते थे कि जिसने उनका गाना एक बार सुन लिया उसे आसानी से किसी का गाना पसंद नहीं आ सकता था। गने का सुरीला होना तो एक बात है परन्तु जब कोई फकीर गा रहा हो तो उसको असर सुनने वालों पर अजीब रंग लाती है। आपको अन्तिम समय में चार भजन बहुत पसंद थे–

1. बहुत ढूँढा न पाया आसमानों में जमीनों में।
   वह निकले मेरे जुलमत खनाये दिल के मकीनों में।।

2. दिल का जुजरा साफ कर, जाना क्या आने के लिए।
   ख्याल गैरों का हटा, उसको बिठाने के लिए।।
3. उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाॅ सो सोवत है।
4. रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम।।

यह सब भजन परम पूज्य बाबूजी महाराज के आदेशानुसार पूजा की विधि में लिख दिये गये हैं।

❀❀❀